Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

श्रौत पात्रों और वेदियों का निर्माण प्रकार

महामहोपाध्याय श्रीपण्डित विद्याधरशास्त्रिपुत्र श्रीदौलतरामगौड द्वारा संशोधित

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

❀ श्रौत यज्ञों में यज्ञीय पात्रों का बनाने का प्रकार, दर्शपूर्णमास चातुर्मास्य और सौमिक वेदी निर्माण प्रकार ❀

(१) **अन्तर्धानकट**—वारण काष्ठ का अर्धचन्द्रकार बारह अंगुलका आध अंगुल मोटा पात्र अन्तर्धानकट होता है। दर्शपूर्णमासादियाग में पत्नीसंयाजमें अपना २ भाग लेने के लिये देवपत्नियां आती हैं उन्हें देवताओं से लजा होती है। इसलिए आड़ करने के लिए गार्हपत्य कुण्ड के ऊपर पत्नी संयाज के समय इसको रखा जाता है। बौधायन शाखा में यह पीपल का होता है। (२) **पशु रशना**—बारह हाथ का तीन मुख वाली कुशा की रस्सी पशु बांधने के लिये पशुरशना कही जाती है। अश्वमेध में १२ या १३ हाथ की पशुरशना होती है। (३) **मयूख**—बारह अंगुल का एक अंगुल मोटा गूलर का वत्सबन्धन के लिए शङ्कु मयूख होता है। (४) **वसाहवनी**—पाक भाण्डस्थित स्नेह को वसा कहते हैं। उसका हवन जिसमें हो उस जुहु सदृशी विकङ्कत काष्ठ की स्रुक् को वसाहवनी कहते हैं। (५) **वेद**—दर्शपूर्णमास आदि में पुरोडाश में लगे हुये भस्म को दूर करने के लिये ५१ कुशाओं से बना हुआ वेणी के आकार का गूंथा हुआ बैठे हुए बछड़े के जानु के सदृश कुशमुष्टि वेद कहलाता है। (६) **कपूर**—मृत्तिका बड़े गर्तवाला अर्थ परिमाण पात्र कपूर (अथरी) होता है। चातुर्मास्य—आदि यज्ञ में इसमें धान भूंजा जाता है। (७) **अनुष्टुब्धि**—जुहु सदृशी आश्वत्थी स्रुक् आपस्तम्बों की अनुष्टुब्धि होती है। (८) **पूर्णपात्र**—दर्शादि इष्टि में स्मार्त प्रोक्षणी पात्र के सदृश यजमान का मुख धोने के लिए जिसमें जल रखा जाता है वह पूर्ण पात्र कहलाता है। (९) **विष्टुति**—वारण काष्ठ की दस २ अङ्गुल की एक अङ्गुल मोटी नीचे के हिस्से में कुछ चतुरस्र और मोटी—जैसी ऊपर के हिस्से में कुछ गोल और पतली—जैसी शलाका (सलाई) को विष्टुति कहते हैं। सोमयोग में उद्गाता ऋत्विग् गान करने के समय साम मन्त्रों की गिनती इसके द्वारा करता है। (१०) **शराव**—मृत्तिका का बड़े मुख का थोड़े गर्तवाला गृहमेधियादि इष्टि में पायस रखने के लिए पात्र (परई) शराव कहलाता है। (११) **शकट**—वारण काष्ठ का अढ़ाई हाथ लम्बा त्रिकोण डेढ़ हाथ चौड़ा, दो हाथ ऊँचा बैठने की जगह में एक हाथ लम्बी चौड़ी काठ की जिसमें पटिया हो ऊपर भी काठकी पटिया से

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

शिखर बना हो एक एक हाथ ऊँचे दो जिसमें चक्र हों सोम को रखने के लिए शकट होता है। दूसरा शकट पूर्व शकट की अपेक्षा से कुछ-छोटा होता है और इसमें शिखर नहीं होता। आश्वलायनशाखा में स्मार्त कर्म में भी बाहर अङ्गुल का शकट होता है। (१२) **परिप्लवा**—वरना काण्ड की दस अङ्गुल लम्बी हंसमुख के सदृश नालीदार पांच अंगुल की गोलाई में एक अङ्गुलवाली विना दण्ड की स्रुक् द्रोण कलश आदि से सोमरस ग्रहण के लिए होती है। (१३) **पशुकुम्भी**—पशु श्रवग के लिए तैजस पात्र को पशुकुम्भी कहते हैं। (१४) **मुसल**—खैर का दस अङ्गुल लम्बा अथवा इच्छा प्रमाण मध्य में कुछ अधिक स्थूल, एक अङ्गुल स्थूल दर्शपूर्णमासादि में व्रीह्यादिकण्डनोपयोगी मुसल है। आपस्तम्ब-शाखा वाले ३६ अंङ्गुल का करण काष्ठ का मुसल मानते हैं। (१५) **ऋतुग्रहपात्र**—काष्मरी काष्ठ के या पीपल के बने हुए प्रोक्षणी पात्र के सदृश दोनों तरफ जिनमें हंसमुख नालिकायें होती हैं सोमरस के ग्रहण और होम आदि के उपयोग में आनेवाले ऋतुयाज के साधनभूत दो पात्र ऋतुपात्र या ऋतुग्रह कहे जाते हैं। (१६) **आज्यस्थाली**—अर्थ परिमाण धातु की मृण्मयी हस्त मित हो ऊपर मुह चौड़ा नीचे को क्रम से छोटी होती जाय घृत को गरम करनेके लिए कटोरा आज्यस्थाली होती है। (१७) **उपवेष**—वारण काण्ड से बना हुआ एक हाथ का पांच अंगुल वाले हाथ के सदृश हाथ के नीचे दो अङ्गुल मोटे गोल दण्ड वाला तप्त अङ्गारों को दूर करने के लिए उपवेष पात्र होता है। आपस्तम्ब शाखा में उपवेष नहीं होता है, किन्तु धृष्टि होती है। (१८) **स्थाली**—उक्थ्यस्थाली, आग्रयणस्थाली, ध्रुवस्थाली, आदित्य स्थाली ये चार स्थालियां धातु या मृन्मय की चरुस्थाली के सदृश होती है। इनमें सोमरस रखा जाता है इनमें उक्थ्यस्थाली का ढकना भी होता है। जिसका मुख और मूल दोनों चौड़ा हो उसे स्थाली कहते हैं। (१९) **इडापात्री**—वारण काष्ठ की एक हाथ लम्बी ८ अंगुल चौड़ी कुछ गोल आकार की चार अङ्गुल दण्ड जिसमें हो दो अंगुल ऊँची एक अंगुल विस्तृत और चौड़ी जिसकी परिधि में किनारी हो ब्रह्मा, होता, अध्वर्यु, अग्नीत् और यजमान—इनका भाग जिसमें रखा जाता हो उसे इडापात्री कहते हैं। तित्तिरि शाखावालों की इडापात्री चौकोर प्रणीता के सदृश आकृतिवाली होती है। आपस्तम्ब शाखा में इस इडापात्री के सदृश दारुपात्री होती है। (२०) **मेक्षण**—वैकङ्कत काष्ठ का दस अङ्गुल लम्बा आगे के हिस्से में दो अङ्गुल की गोलाई कलछी की तरह मुख हो और बचे हुए हिस्से में कनिष्ठा अंगुली के अग्रभाग के समान स्थूल दण्ड हो, चरु इष्टि में चरु का

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

ग्रहण और होम जिससे होता है उसको मेक्षण कहते हैं। आपस्तम्ब शाखा में श्रौत कर्म में गूलर का धृष्टि के सदृश एक हाथ का मेक्षण होता है और स्मार्त कर्म में गूलर का दस अंगुल का मेक्षण होता है। (२१) पृषदाज्यग्रहणी—पृषदाज्यधानी दधिमिश्रित आज्य पृषदाज्य होता है। वह जिस स्रुक् के द्वारा गृहीत हो, उपभृत के सदृश पीपल की स्रुक् पृषदाज्य ग्रहणी अथवा पृषदाज्यधानी कही जाती है—आपस्तम्ब शाखा में है। माध्यन्दिन शाखा में पृषदाज्य ग्रहण तैजस पात्र (कटोरे) में होता है। (२२) प्रचरणी—वैकङ्कत काष्ठ की जुहु के सदृश होम करने के लिये सोमयाग में स्रुक् प्रचरणी कही जाती है। आपस्तम्ब शाखा में यह पलाश की विहित है। (२३) परशु—बर्हि के छेदन के लिए एक हाथ का दण्ड जिसमें हो, परशु के आकार का खदिर आदि काष्ठ का कुठार परशु है। यह बौधायन शाखावालों के लिए ही है। (२४) अग्निहोत्रहवणी—विकङ्कत काष्ठ की जुहू के सदृश बाहुमात्र लम्बी स्रुक् को अग्निहोत्र हवणी कहते हैं, इसीसे श्रौत अग्निहोत्र होता है। आपस्तम्बादि शाखा में चौबीस अंगुल लम्बी अग्निहोत्र हवणी होती है। (२५) अभ्रि—वारण काष्ठ की एक हाथ की अग्रभाग से तीखी मूलभाग में एक अंगुल की गोलाई में मोटी और मूल भाग में वेदि खनन यूपादि गर्तपरिलेखन में उपयुक्त अभ्रि होती है। महावीर संभरण में—विकङ्कत की अभ्रि होती है। सचयन सोमयाग में—चित्र विचित्र दोनों तरफ से तीखी मध्य में छिद्रवाली अथवा सुवर्ण की अभ्रि होती है। (२६) दोहन-पात्र—वैकङ्कत का प्रणाली रहित सदण्ड प्रोक्षणी पात्र सदृश पात्र दोहन पात्र होता है। सोमयाग में उसकी आवश्यकता होती है। (२७) दर्वी—विकङ्कत काष्ठ की चार अङ्गुल की गोलाई में एक अंगुल खातवाली बचे हुये हिस्से में एक अंगुठे मोटे दण्ड सहित दर्वी होमादि में उपयुक्त (कलछी) दर्वी है। आपस्तम्ब शाखा में स्मार्त कर्म में बारह अंगुल की दर्वी होती है। श्रौत में तो एक हाथ की होती है। आपस्तम्ब शाखा में मेक्षण भी दर्वी सदृश होता है। (२८) अधिषवणफलक—वारण काष्ठ के एक एक हाथ के बारह २ अंगुल चौड़े एक एक अंगुल मोटे दो काष्ठ-पीठ परस्पर काष्ठ के शंकु से सटे हुए अधिषवण फलक होते हैं। इनके ऊपर सोमलता कूटी जाती है। सूत्रान्तर में गूलर और पलाश के भी विहित हैं! (२९) असिद—दस अङ्गुल का खैर या लोह का छुरा असिद होता है, इससे कुशा काटी जाती है। बौधायन शाखावाले इसका उपयोग करते हैं। (३०) अन्वाहार्यपात्र—दर्शपूर्णमास में ब्रह्मा, होता, अध्वर्यु और अग्नीध्र को दक्षिणा के निमित्त दक्षिणाग्नि में पका हुआ ओदन

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

दिया जाता है उसको अन्वाहार्य कहते हैं। पकाने के लिये जो ताम्रादि अर्थ परिमाण पात्र है उसको अन्वाहार्य पात्र कहते हैं। (३१) **ग्रावा**—पाषाण के सोलह अंगुल या बारह अंगुल के मूल में स्थूल ऊपर के हिस्से में कुछ पतले मुष्टि से पकड़ने लायक ग्रावा होते हैं। इनसे सोमलता कूटी जाती है। (३२) **उपभृत्**—पीपल की जुहू के सदृश स्रुक् उपभृत् होती है। दर्शपूर्णमासादि यज्ञ में अध्वर्यु दक्षिण हस्त से जुहू द्वारा होम करता है और होम के समय वामहस्त में जुहू के समीप इसको रखता है। इसलिए इसका नाम उपभृत् है। आपस्तम्ब शाखा में २४ अंगुल इसका प्रमाण है। आपस्तम्ब शाखा वाले इसको अनुष्टुब्घि कहते हैं। (३३) **उत्पवन पात्र**—आपस्तम्ब शाखावालों के यहाँ प्रोक्षणी पात्र सदृश एक उत्स्वन पात्र होता है। (३४) **उपांशुसवन**—उपांशु नामक सोमरस के हवन के लिये जिस पाषाण (लोहे) से सोमलता कूटी जाती है उस प्रादेश परिमित पाषाण को उपांशुसवन कहते हैं। (३५) **उलूखल**—पलाश या खैर अथवा वारण काष्ठ की दस अंगुल या जानु प्रमाण अथवा इच्छा प्रमाण चार अंगुल की गोलाई में मोटा, ऊपर एक अंगुल खात, मध्य में कुछ संकुचित चरु पुरोडाश संबंधी व्रीहि आदि के कण्डन में उपयोगी उलूखल होता है। आश्वलायन तथा आपस्तम्ब शाखा वालों के यहाँ स्मार्त कर्म में उलूखल ६ अंगुल के होते हैं। आपस्तम्ब के यहाँ खैर का होता है। (३६) **एक धन**—सोमरस को बढ़ाने वाले जल एक धन कहे जाते हैं। एकमात्र सोम ही है धन जिनका यह इसका अर्थ है। वे जल जिन कलशों से निकाले जायं वे छोटे छोटे धातु के या मृत्तिका के कलश भी एकधन कहे जाते हैं। सोमयाग में तीन से १५ तक विषम संख्या के ये कलश होते हैं। (३७) **मुसल**—वारण काष्ठ खैर या पलाश का दस अंगुल लम्बा एक अंगुल गोलाई में मोटा या इच्छा प्रमाण मध्य में कुछ ज्यादा स्थूल दर्शपूर्णमासादि यज्ञ में व्रीहि आदि के कण्डन में उपयोगी मुसल होता है। आश्वलायन शाखा में स्मार्त कर्म में खैर का छः अंगुल लम्बा यह होता है। (३८) **जुहू**—पलाश लकड़ी की बाहु प्रमाण लम्बी मूलभाग में एक अङ्गुल मोटी फिर वहाँ से अग्रभाग तक क्रम से कुछ स्थूल दण्डयुक्त अग्र भाग में पांच अंगुल वृत्त हथेली प्रमाण मुखवाली त्र्यंगुल खात हंसमुख सदृश नाली से युक्त श्रौत कर्म में जिससे हवन किया जाय ऐसी स्रुक् को जुहू कहते हैं। कृष्ण यजुर्वेदियों के यहाँ कौवे के सदृश पुच्छवाली चौबीस अंगुल लम्बी या बयालीस अंगुल की जुहू होती है। कात्यायन के अतिरिक्त २४ अंगुल की जुहू होती है। (३९) **चमस**—विकङ्कत काष्ठ के बारह अंगुल चौड़े, चार अंगुल ऊँचे, तीन अंगुल गर्तवाले, तीन अंगुल

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

दण्डवाले चौकोर प्रणीता पात्र के सदृश सोमरस को रखने, होम करने और पानी के लिए चमस होते हैं। ये चमस दस होते हैं। इनके दण्डों में पृथक् पृथक् चिन्ह होते हैं। जैसे—होता के चमस के दण्ड में गोल चिन्ह, ब्रह्मा के दण्ड में चतुरस्र, उद्गाता के दण्ड में त्रिकोण, यजमान के चमस के दण्ड अग्र में चौड़ा, प्रशास्ता के चमस के दण्ड के नीचे का भाग टेढ़ा, ब्राह्मणाच्छंसी के दण्ड का ऊपर का भाग टेढ़ा, नेष्टा के चमस का दंड दो टुकड़े का, अच्छावाक् चमस का दंड आगे से तीखा, पोता के चमस का दंड द्विशाख। आपस्तम्ब शाखा में-नेष्टा का चमस दक्षिणावृत और अच्छावाक् चमस वामावृत होता है। (४०) **यजमानाभिषेकासन्दी**—गूलर की एक एक साथ पैरवाली चतुष्कोण एक हाथ लम्बी चौड़ी मुञ्ज की रस्सी से बिनी हुई वाजपेय याग में यजमान अभिषेक के समय इस पर बैठता है इसलिए यह यजमानाभिषेकासन्दी कही जाती है। (४१) **यूपरशना**—आठ हाथ लम्बी दूनी कुशा की रस्सी यूप में लपेटने के लिए यूपरशना होती है। (४२) **शृतावदान**—विकङ्कत काष्ठ का अग्रभाग में अंगुष्ठ पर्वमात्र चौड़ा और लम्बा, तीखे अग्रवाला दस अंगुल लम्बा अग्रभाग से बचे हुए हिस्से में एक अंगुल गोल दण्डवाला पक्व पुरोडाश के तोड़ने में उपयुक्त होता है। यह शृतावदान आपस्तम्ब शाखा में नहीं है। पितृ यज्ञ में अग्रभाग में अर्थात् अंगुष्ठ पर्वमात्र में गोकर्ण के सदृश होता है। आपस्तम्ब शाखा में पितृ यज्ञ में १२ अंगुल का शृतावदान होता है। उसमें भी मूल में दो अङ्गुल दण्ड और १० अङ्गुल गौ के कान के समान होता है। (४३) **पूर्ण पात्र**—दर्शयागादि में स्मार्त प्रोक्षणी पात्र के सदृश अर्थात् वारण काष्ठ का द्वादशांगुल दीर्घ एक अङ्गुल दण्ड मध्य में हथेली के बराबर गोल तीन अङ्गुल गोल गहरा किनारे किनारे एक अङ्गुल मोटा, अग्रभाग में हंस के मुख सदृश नालीदार पात्र होता है। (४४) **पूतभृत्**—सुवर्ण आदि धातु का अथवा मृण्मय पन्द्रह अङ्गुल चौड़ा, आठ अङ्गुल की बैठकी सोलह अङ्गुल ऊँचा अथवा इच्छा प्रमाण पवित्र सोम को धारण करनेवाला कलश होता है। **आधवनीयकलश**—जिसमें सोम का अच्छी तरह से प्रक्षालन हो उस कलश के सदृश बृहन्मुख कलश का नाम है। (४५) **पुरोडाशपात्री**—वारण काष्ठ की दस अङ्गुल चौकोर एक अङ्गुल मोटी मध्यभाग में छः अङ्गुल वृत्त, यवमात्र खात वाली, मूल में दो अङ्गुल दण्ड पुरोडाश के स्थापन में उपयुक्त होने वाली पात्री है। (४६) **पिन्वन**—वारण काष्ठका स्रुक् मुख के आकार सदृश दस अङ्गुल का विना दण्ड का पात्र पिन्वन कहा जाता है। (४७) **पान्नेजन कलश**—पशु के अङ्गों का जिन जलों से प्रक्षालन होता है उन जलों

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

को पान्नेजन कहते हैं। पान्नेजन जल जिस कलश में रखे जाते हैं उन इच्छा प्रमाण तैजसपात्र को पान्नेजल कलश कहते हैं। (४८) **परीशास**—दो हाथ लम्बे, दो अङ्गुल मोटे, दो अङ्गुल चौड़े, गूलर के मध्यभाग से कलछी मुँख के सदृश महावीर पात्र को पकड़ने लायक परीशास कहे जाते हैं। आपस्तंत्र शाखा वाले इनको शफ कहते है। (४९) **सन्नहन**—लम्बी लम्बी नव कुशाओं के वेण्याकार गूंथकर इध्म और वर्हि बांधने के लिए जो रज्जु बनायी जाती है उसको सन्नहन कहते हैं। (५०) **होतृषदन**—वरना काष्ठ का एक हाथ लम्बा, एक अङ्गुल मोटा, चारों कोनेमें एक २ अङ्गुल ऊँचे पावे जिसमें हो ऐसा अठारह अङ्गुल चौड़ा मूल तीन अङ्गुल लम्बा एक अङ्गुल मोटा और चौड़ा दण्ड जिसमें हो वह दर्शपूर्णमासादि यज्ञ में होता को वैठने के लिये पीठ को होतृषदन कहते हैं। (५१) **सोमासन्दी**—गूलर की दो हाथ चौड़ी यजमान की नाभी प्रमाण ऊँची ४ पावों वाली मुञ्ज की रस्सी से बीनी हुई सोम रखने के लिए आसन्दी सोमासन्दी कही जाती है। सौत्रामणी यज्ञ में सोमासन्दी जानुमात्र प्रमाण की होती है। (५२) **सोमपर्याणहन**—वस्त्र से बंधे हुये सोम को ढांकने के लिये जो वस्त्र है उसे सोमपर्याणहन कहते हैं। (५३) **संभरणो**—वारण काष्ठ की बारह अंगुल वृत्तमुख चार अंगुल खात बिना दण्ड का सोम रखने का पात्र।(कटोरा) संभरणी है। (५४) **शङ्कु**—गूलर आदि का दस अङ्गुल लम्बा स्थूल मुख अग्निष्टोमादिक यज्ञ में दीक्षिता पत्नी के कण्डूयनादि में उपयुक्त शङ्कु कहा जाता है। (५५) **उदत्रवन**—सोमयाग में अम्भृण पात्रों से जल निकालने के लिए जो छोटा मिट्टी का पात्र (पुरवा) होता है उसको उदञ्चन पात्र उदत्रवन चमस कहते हैं। आपस्तम्ब शाखा में यह उदत्रवन पात्र प्रणीतापात्र के सदृश वारण काष्ठ का होता है। (५६) **उपयमनी**—उदुम्बर की दो हाथ लम्बी स्रुची के मुख से दूने मुख की जुहू सदृश स्रुक् को उपयमनी कहते है। आपस्तम्ब शाखा में यह बाहुप्रमाण की होती है। (५७) **इध्म**—पलाश की एक हाथ लम्बी एक अङ्गुल मोटी फटी हुई नहीं, घुनी हुई नहीं, द्विधाभिन्न नहीं, दो शाखावाली नहीं, सीधी और त्वचा के सहित समिधा को इध्म कहते हैं। (५८) **वर्हि**—असंस्कृत और असंख्यात कुशा को वर्हि कहते हैं। (५९) **सम्भरण पात्र**— वाजपेय यज्ञ में १७ प्रकार के अन्न का हवन होता है। ये अन्न जिस पात्र में रखे जाते हैं वह अर्थ परिमाण पात्र सम्भरण पात्र होता है। (६०) **वाजिनभाण्ड**—गरम दूध में दधि के छोड़ने से दूध फट जाता है उसमें कठिन भाग को आमिक्षा और द्रवभागको वाजिन कहते हैं। इनके

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

रखने के योग्य अर्थपरिमाण कांस्यादि तैजस पात्र को वाजिनभाण्ड कहते हैं। गिंडुइवाला गलास। (६१) उपसर्जनी पात्र—दर्शपूर्ण मासादि यज्ञ में पुरोडाश के लिये चावल का यव के आटे में मिलाये जानेवाले गार्हपत्य अग्नि में गरम किये हुए गरम जल को उपसर्जनी कहते हैं। उसको गरम करने के लिए अर्थ परिमाण ताम्रादिपात्र को उससर्जनी पात्र कहते हैं सोमयाग में दीक्षित सपत्नीक यजमान को उदक साध्य सब कर्म गरम जल से करने चाहिये ऐसा विधान हैं। यजमान के लिये गार्हपत्य अग्नि में और तन्निमित्त यजमान पत्नी के लिए दक्षिणाग्नि में जल गरम किये जाते हैं। उन गरम जल को मदन्ती कहते हैं। उन जलों को गरम करने के तैजसपात्र को उपसर्जनी पात्र कहते हैं। (६२) रौहिणकपाल—छः अङ्गुल का वृत्त आधा अंगुल ऊँचा मृत्तिका से बनाकर पकाया हुआ रौहिण पुरोडाश के पकाने के लिये पात्र को रौहिण कपाल कहते हैं। (६३) योक्त्र—मुञ्ज से बना हुआ तीन लड़ी, चार हाथी की वेण्याकार दर्शपूर्णमासादि यज्ञ में यजमान पत्नी के कटि प्रदेश में बांधने के लिये रज्जु (मेखला) योक्त्र कहलाता हैं। (६४) उद्गात्रासन्दी—गूलर के प्रदेश मात्र को दस अङ्गुल चार पावे वाली एक हाथ लम्बी चौड़ी मुञ्ज की रस्सी से बिनो हुई गवामयन यज्ञ में उद्गाता के बैंठने के लिये पीठ को उद्गात्रासन्दी की कहते हैं। (६५) विघन—वरना का या पीपल का एक हाथ का शङ्कु (खूंटी) गाड़ने के उपयोगी मुद्गर को विघन कहते हैं। कात्यायन सूत्र में विघन शब्द से मुद्गर का व्यवहार नहीं है। (६६) विकङ्कत शकल—विकङ्कत काष्ठ की दस दस अङ्गुल की समिधा विकङ्कत शकल कही जाती है। (६७) दण्ड—गूलर काष्ठ की यजमान के मुख के बराबर मुष्टिमात्र स्थूल सोमयाग में यजमान और मैत्रवरुण के धारण करने के योग्य दण्ड होता है। (६८) दधि घर्म—प्रवर्ग्य में होमोपयोगी दधिका जिस पात्र से ग्रहण हो और हवन हो वह गूलर प्रादेशमात्र का दस अङ्गुल का पात्र मूल से लेकर अग्रतक चार चार अङ्गुल चौकोर ऊपर मध्य में दो अङ्गुल वृत्त, एक अङ्गुल खात दधि घर्म कहा जाता है। (६९) दारुपात्री—कात्यायनों की इडापात्री को आपस्तम्ब दारुपात्री कहते हैं। (७०) धवित्र—मृगचर्म से बने हुये पंखे को धवित्र कहते हैं। महावीर को हवा करने में यह काम आता है। (७१) धृष्टि—विकङ्कत काष्ठ की एक हाथ लम्बी अग्रभाग में चार अङ्गुल चौड़ी, तीक्ष्णाग्र, अग्र से बचे हुए हिस्से में दो अङ्गुल के गोल स्थूल दण्ड से मुक्त अङ्गार, भस्म आदि को हटाने के लिये पात्र विशेष को धृष्टि कहते हैं। इसका उपयोग आपस्तम्ब शाखा वाले दर्शपूर्णमास में करते हैं। कात्यायन शाखा वाले सोमयाग में इसका

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

उपयोग करते हैं। यहाँ केवल यह उदुम्बर की होती है। (७२) **कृष्ण विषाणा**—तीन या पांच स्थान में ऊँची दस अङ्गुल का अग्रभाग के सहित कृष्ण मृग के श्रृङ्ग को कृष्ण विषाणा कहते हैं। सोमयाग में दीक्षित यजमान के शरीर में खाज होने पर इसीसे खजुवाना चाहिए। (७३) **वाजिन चमस**—प्रणीता सदृश पात्र वाजिन चमस आपस्तम्ब शाखा में है यह वाजिन रखने के लिये है। गरम दूध दही छोड़कर फाड़ दिया जाता है उसमें कठिन भाग को आमिक्षा और द्रव भाग को वाजिन कहते हैं। (७४) **गलग्राही**—तैजस, तांबा, पीतल आदि की एक हाथ की सड़सी गलग्राही होती है। (७५) **स्रुक्**—विकङ्कत काष्ठ की बाहुमात्र लम्बी मूलभाग में एक अङ्गूठे के बराबर मोटी फिर वहाँ से अग्रभाग तक क्रमशः कुछ कुछ स्थूल दण्ड वाली अग्रभाग में पांच अङ्गुल की गोलाई को मुख और मुख में तीन अङ्गुल खात हंसमुख के सदृश चोंचदार होम करने का पात्र स्रुक् होता है। स्मार्त कर्म में - यह बारह अङ्गुल की होती है। बौधायन आपस्तम्ब और हिरण्यकेशि शाखा में २४ अङ्गुल की होती है। किसी के मत में कौवे के सदृश पूंछ वाली ४२ अङ्गुल की होती है। (७६) **यूप**—सोमयाग में खैर का पाँच हाथ लम्बा अष्टकोणा बहुत मोटा न बहुत पतला किन्तु लम्बाई के माफिक मोटा अग्रभाग के बीच में एक अङ्गुल मोटा बारह अङ्गुल लम्बा शंकु जो चषाल में घुसने लायक चषाल के सहित हो, उसको यूप कहते हैं। निरूढ़ पशु में—पलाश का यूप होता है। अग्निष्टोमादि यज्ञ में ग्यारह यूप बनाना यह भी पक्ष है। इस पक्ष में उपशय यूप भी बारहवाँ बिना छीला छाला होता है। वाजपेययाग में—१७ यूप १७ हाथ के होते हैं। अश्वमेध में—२१-२१ हाथ के २१ यूप होते हैं। एक रज्जुदाल का, दो देवदारु के, छः बेल के, छः खैर के छः पलाश के होते हैं। श्येन याग में यूप चषाल रहित होता है और सांप की तरह तीखे अग्रवाला होता है। वह यूप हल का दण्ड होता है इस यूप को खलेवाली कहते हैं। (७७) **ग्रह**—माध्यन्दिनों के विकङ्कत के, आपस्तम्बों के गूलर के उलूखल के सदृश चार अङ्गुल की गोलाई के मोटे ऊपर के हिस्से में एक अङ्गुल खात वाले, मध्य में कुछ संकुचित्त सोमरस को रखने और होम के उपयोगी पात्र ग्रह कहे जाते हैं। इसमें आश्विन ग्रह में ऊपर के हिस्से में ओष्ठ के सदृश, मैत्रावरुण ग्रह में अजागलस्तन के सदृश, ऐन्द्रवायव्य ग्रह में मेखला के सदृश चिह्न होता है। सौत्रामणी में—आश्विन ग्रह पीपल का, सारस्वती ग्रह गूलर का, ऐन्द्र ग्रह वटका होता है। अश्वमेध में—सुवर्ण और रजत के एक एक ग्रह होते हैं। षोडशि

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

याग में षोडशि ग्रह खैर का होता है और यह ग्रह मूल से अग्रतक चतुष्कोण होता है। शुक्रग्रह सर्वत्र बेल का होता है। आपस्तम्ब शाखा में—उपांशुग्रह, अन्तर्यामग्रह, ऐन्द्रवायव्यग्रह मैत्रावरुण ग्रह, आश्विन, शुक्रमन्थी, उक्थ्य, अतिग्राह्य ग्रह तीन, दधिग्रह, अदाभ्य, आदित्य, षोडश ग्रह, ऋतुपात्र ग्रह दो ये १७ ग्रह होते हैं। (७८) **स्फ्य—**खैर का एक हाथ लम्बा, चार अङ्गुल चौड़ा, खड्ग के सदृश मूल में चार अङ्गुल का दण्ड तीखा, अग्र वेदी को खोदना रेखा करना आदि कार्य में उपयोगी वज्र या स्फ्य कहा जाता है। यह स्फ्य माध्यन्दिन शाखा में सीधा होता है और शाखा में मध्य में कुछ टेढा होता है। आश्वलायन शाखा में स्मार्त कर्म में बारह अङ्गुल का स्फ्य होता है। हिरण्यकेशी शाखा में वरना का भी स्फ्य होता है। भारद्वाज और आपस्तम्ब शाखा में बाहु के बराबर भी वज्र विहित है। यह पक्ष अब नहीं चलता है। आश्वलायन शाखा में स्मार्त कर्म में स्फ्य नहीं होता है। (७९) **स्रुव—**खैर का एक हाथ लम्बा और अङ्गूठे के पर्व की मोटाई में गोल त्रिलयुक्त मूल में कनिष्ठिका के अग्र के बराबर स्थूल फिर अग्रतक कुछ कुछ और मोटा होम करने के लिये स्रुव होता है। अग्निहोत्र का स्रुव वैकङ्कत होता है। राजसूय में—अपामार्ग तण्डुल होम के लिये पलाश का स्रुव होता है। सचयन सोमयाग में—गुलर का स्रुव चौकोर मुखवाला होता है। धर्म में भी गुलर का स्रुव होता है और विनायक शान्ति में भी पितृमेघ में धारण काष्ठ का स्रुव होता है। आश्वलायन शाखा में स्मार्त कर्म में बारह अंगुल का स्रुव होता है। श्रौत कर्म में आश्वलायनों को भी एक हाथ का स्रुव होता है। (८०) **ऋतुपात्र ग्रह** काश्मर्य (गंभारी) या पीपल के प्रोक्षणी पात्र के सदृश दोनों तरफ हंसमुख की तरह नाली के सहित ऋतुओं के योग के लिये सोमरस ग्रहण और होम के उपयोगी दो पात्र ऋतुपात्र या ऋतुग्रह कहे जाते हैं। आपस्तम्ब शाखा में ऋतुग्रह भी उलूखलाकार होते हैं। (८१) **प्रोक्षणधानी—**जुहू के सदृश स्रुक् आपस्तम्ब शाखावालों के यहाँ प्रोक्षण धानी होती है। (८२) **शूल—**वारण काष्ठ का अभ्रि के सदृश शूल होता है। (८३) **प्राशित्रहरण—**वारण काष्ठ का चार अंगुल लम्बा चौड़ा चौकोर एक अंगुल मोटा मध्य में तीन अंगुल गोलाई में यवमात्र खात प्राशित्र हरण होता है। ब्रह्मा को हुत शेष भाग दिया जाता है। उसका नाम प्राशित्र है, वह जिस पात्र के द्वारा दिया जाय वह प्राशित्रहरण कहलाता है। आपस्तम्ब शाखावाले खैर का दस अंगुल का गोकरणा कृति श्वतावदान मानते हैं। आजकल खैर का प्रोक्षणी पात्र के सदृश प्राशित्रहरण आपस्तम्ब शाखा वाले बनाते हैं। (८४)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

निश्रेणी—वाजपेय यज्ञ में १७ हाथ का यूप होता है। सपत्नीक यजमान जिस सीढ़ी के द्वारा यूप से ऊपर ऊँचा होता है, वारण काष्ठ की उस सीढ़ी का नाम निश्रेणी है। (८५) **नेत्र**—सन और गौ के पूंछ के बालों से बनाई गई चार हाथ की तीन लर की वेणी के समान गूंथी हुई अरणि मन्थन रज्जु को नेत्र कहते हैं। (८६) **निदान**—सोमयाग में गौ को और बछड़े को बांधने के लिए रज्जु को आपस्तम्ब शाखावाले निदान कहते हैं। (८७) **चात्र उपमन्थ**—अरणि मन्थन के लिये आठ अंगुल का एक काष्ठ शंकु जिस मन्थन दण्ड में तक्षा के द्वारा लगाया जाता है वह मन्थन दण्ड खैर का बाहर अंगुल लम्बा दो अंगुल के लोह कील के सहित तीन अंगुल की गोलाई वाला रज्जु के लपेटने (घुमाने) के लिए अनेक वलययुत चात्र और उपमन्थ भी कहा जाता है।

(दर्श-पौर्णमास-वेदी निर्माण प्रकार)

गार्हपत्य अग्नि के मध्य से आहवनीय अग्नि के मध्य तक बीच में अन्तर आठ, ग्यारह या बाहर प्रक्रम होते हैं।

गार्हपत्याग्नि के मध्य भाग को केन्द्र मानकर साढे तेरह अंगुल लंबी रस्सी से वृत्त बनाना चाहिये। यह गार्हपत्याग्नि का स्थान है।

आहवनीयाग्नि का स्थान—एक हाथ लंबा और चौडा होता है। गार्हपत्य और आहवनीय के अन्तराल के द्वादश पद परिमित पक्ष में उनका अन्तराल छः हाथ का होने के कारण छः हाथ की रज्जु में मिलाकर अर्थात् सात हाथ की रज्जु को लेकर उसके दोनों छोर में पाश बनाकर और रज्जु के मध्य में प्रत्येक तृतीयांश पर चिह्न बनाकर रस्सी का एक पाश जिस स्थान पर गार्हपत्य के शंकु में डालकर दूसरे पाश को आहवनीय के मध्य शंकु में डाल देवे और रज्जु के मध्यवर्ती दोनों चिन्हों में से पश्चिम वाले चिन्ह भाग में रज्जु को ग्रहण कर दक्षिण की तरफ खींचे। जहाँ पर उक्त चिन्ह पहुंचे वहाँ एक चिन्ह कर उस स्थान से उत्तर की ओर साढे नव अंगुल की दूरी पर एक शंकु गाड़े। अब उस शंकु स्थान को केन्द्र मानकर उन्नीस अंगुल और एक यव परिमित रस्सी से वृत्त बनावे। वृत्त के बीच में केन्द्र से लगी हुई पूर्व से – पश्चिम तक एक सीधी रेखा करे और रेखा से उत्तर का भाग छोड़ दे। वृत्त का दक्षिणार्ध दक्षिणाग्नि का स्थान है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

पहले कहे हुए दो चिन्हों में से प्रथम चिन्ह के स्थान में रस्सी पकड़कर उत्तर की ओर खींचने पर जहाँ पर चिन्ह पहुँच जाता है उसे उत्कर स्थान समझना चाहिये।

आहवनीयाग्नि के मध्य के शंकु से पश्चिम की ओर तीन अरत्नि व्यवहित देश में शंकु को गाड़ देवे। आहवनीय से पूर्व वाले शंकु से साढ़े तीन अरत्नि व्यवहित देश में दक्षिण की ओर साढे तीन अरत्नि व्यवहित देश में शंकु गाड़ दे। ऐसा ही उत्तर देश में समझना चाहिये। चारों कोने के शंकुओं में सूत्र लगाने से विषम चतुरस्र होता है। पूर्व के शंकु से लेकर पश्चिम पर्यन्त दोनों कोने का वेष्टन करते हुए सूत्र देवे। उक्त सूत्र के आधे परिमित सूत्र से पूर्व दिशा के शंकु से दक्षिण कोणस्थ शंकु का वेष्टन से दक्षिण दिशा की ओर एवं उत्तर कोणस्थ शंकु को गाड़ दे। उत्तर कोणस्थ शंकु के वेष्टन से एक शंकु गाड़े। उन शंकुओं से वेदी के मध्य में पूर्वार्ध चतुर्थांश में दो संग्रह करना चाहिये।

(चातुर्मास्य वेदी निर्माण प्रकार)

चातुर्मास्ययाग में पूर्व दिशा में दो वेदी बनती हैं। उनमें दक्षिण वेदी प्रतिप्रस्थाता के लिए और उत्तर वेदी अध्वर्यु की होती है।

प्रतिप्रस्थाता की वेदी दर्श-पूर्ण मास की तरह होती है। इस याग में गार्हपत्य, दक्षिणाग्नि और उत्कर नहीं होते।

अध्वर्यु की वेदी भी दर्श पूर्ण मास याग की तरह होती है। परन्तु इस वेदी में अन्तर केवल पूर्व और पश्चिम की लंबाई सात अरत्नि या छः अरत्नि होती है और विस्तार दर्श-पौर्ण मास की तरह ही है। इसमें संग्रह नहीं होते हैं।

आहवनीय के स्थल पर बत्तीस अंगुल लंबी उतनी ही चौड़ी बराबर के चार कोने वाली, चार अंगुल ऊँची उत्तर वेदी बनानी चाहिये। उसके बीच में एक नाभी रहती है जो एक अंगुल ऊंची और वितस्ति परिमित लंबी चौड़ी रहती है। उसके पीछे की ओर दोनों वेदी का बीच भाग प्रादेश परिमित होता है उत्कर दर्शपौर्ण मास की तरह पूर्व तृतीय में वेदी से बाहर होता है। वह उत्कर छः अंगुल वृत्त को घुमाने से बारह अंगुल वृत्त का और दो अंगुल गहरा बनाना चाहिये। उत्कर के पूर्व की ओर बारह अंगुल भूमि के छोड कर बत्तीस अंगुल लंबा चौडा, छः या आठ अंगुल

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

गहरा चात्वाल नामक गर्त बनाना चाहिये। अध्वर्यु वेदी से पश्चिम की ओर दो अरत्नि छोड़कर इकतालीस या अड़तालीस अंगुल परिमित हाथ भूमि से दर्श-पौर्णमास की तरह गार्हपत्य बनाना चाहिये। इसी प्रकार दक्षिणाग्नि स्थान के पश्चिम वितृतीय देश में गार्हपत्य से दक्षिण की ओर अढ़ाई हाथ अन्तराल छोड़कर बनाना चाहिये। दक्षिणाग्नि से पश्चिम की ओर दो अंगुल परिमित अन्तराल छोड़कर प्रतिप्रस्थाता की वेदी के मध्य के समान सूत्र वाली प्राकृति वेदी सभ्य, आवसथ्य, गार्हपत्य, दक्षिणाग्नि, संग्रह, उत्कर और आहवनीय से युक्त बनानी चाहिये।

प्राकृति वेदी से सम्बन्धित दक्षिणाग्नि से एक हाथ अन्तराल छोड़कर दक्षिण दिशा में दक्षिणाग्नि मध्य के समान सूत्रवाली पितृयज्ञ वेदी को दर्श-पौर्ण मास की तरह बनानी चाहिये। यह पितृ-यज्ञ वेदी दक्षिणदिशा में तीन अरत्नि विस्तार वाली और उत्तर दिशा में चार अरत्नि विस्तार वाली, तीन अरत्नि लंबी, मध्य में दक्षिणाग्नि से युक्त होती है।

यहाँ पर गार्हपत्य, आहवनीय, संग्रह एवं उत्कर नहीं होते। इसी प्रकार उत्तर की ओर अथवा चतुष्पथ में त्र्यम्बकेष्टि के लिये प्रकृति वेदी आहवनीय युक्त प्रकृति की तरह बनाना चाहिये। यह वेदी उत्तर दिशा में तीन अरत्नि विस्तृत दक्षिण दिशा में चार अरत्नि विस्तृत और तीन अरत्नि लंबी होती है। इसमें गार्हपत्याग्नि, दक्षिणाग्नि संग्रह स्थान और उत्कर का अभाव होता है।

(सौमिक वेदी निर्माण विधान)

सर्व प्रथम याग योग्य भूमि को निश्चयकर उस भूमि में पश्चिम की ओर बारह या दस अरत्नि के माप का चौकोण मण्डप बनाना चाहिये। इस मण्डप को छोड़ कर तीनों दिशाओं में द्वार वाला प्राग्वंश पांच हाथ लंबे और चार स्तंभों से युक्त, चारों ओर, और ऊपर छाया हुआ होना चाहिये। छाजन के ऊपर दक्षिणोत्तर तृण और वलिकाओं का स्थापन करना चाहिये। इस मण्डप को प्राचीन वंश अर्थात् मध्यवंश प्रागग्र वाला या विमितशाला भी कहते हैं।

इसमें सर्वत्र दो अरत्नि विस्तृत द्वार होते हैं। इस विमित के पूर्वान्त से दो अरत्नि व्यवहित देश में एक शंकु गाड़ना चाहिये। वह आहवनीय

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

का मध्य भाग होता है। आहवनीय का स्थान—एक हाथ लम्बा और चौड़ा होना चाहिये। उसके पीछे सात अरत्नि व्यवहित देश में शंकु देना चाहिये। यह गार्हपत्य का मध्य भाग होगा। वहाँ पर साढ़े तेरह अंगुल रस्सी से एक वृत्त बनाना चाहिये। यह गार्हपत्य स्थान होगा। चार अंगुल चौड़ी एवं बारह अंगुल उत्सेध (ऊँची) मेखला सर्वत्र होनी चाहिये।

आहवनीय मध्य के शंकु को लेकर गार्हपत्य के बीच तक की भूमि सात अरत्नि परिमित होने के कारण है। अतः सात अरत्नि परिमित रज्जु को लेकर उसके सप्तम भाग अर्थात् एक अरत्नि रज्जु बढ़ाकर अर्थात् आठ हाथ की रज्जु लेकर उसके दोनों छोर पर पाश देकर रस्सी के प्रत्येक तीसरे भाग में चिह्न देकर एक पाश को गार्हपत्य के मध्य शंकु मे डालकर दूसरा पाश आहवनीय मध्य शंकु में डाल दे। रज्जु के बीच के दो चिह्नों में से पश्चिम चिह्न पर रस्सी पकड़ कर दक्षिण की ओर खींचे। जहाँ पर वह चिह्न पहुँचे वहाँ पर एक चिह्न कर उस चिह्न स्थान से उत्तर की ओर साढ़े नव अंगुल व्यवहित भूमि पर शंकु देना चाहिये। उस शंकु के स्थल को केन्द्र मानकर उन्नीस अंगुल और एक यव की लंबी रज्जु से वृत्त बनाना चाहिये। वृत्त के बीच में केन्द्र से सटी हुई परिधि से पूर्व से लेकर पश्चिम तक एक सीधी रेखा बनानी चाहिये। रेखा से उत्तर की भूमि को छोड़ देना चाहिये। वृत्त का दक्षिणार्ध दक्षिणाग्नि का स्थान समझना चाहिये।

रज्जु में किये हुए दो चिह्नों में प्रथम चिह्न को पकड़ कर उत्तर की ओर खींचने पर जहाँ पर चिह्न पहुँचे वह उत्कर का स्थल है। वहाँ पर एक अंगुल गहरा एक वृत्त बनाना चाहिये।

आहवनीय के मध्य शंकु से तीन अरत्नि दूरी पर एक शंकु देना चाहिये। उस शंकु से दक्षिण और उत्तर की ओर दो अरत्नि व्यवहित देश में दो शंकु देना चाहिये। इन दोनों स्थलों को श्रोणी समझना चाहिये।

आहवनीय के पूर्व की ओर के शंकु से दक्षिण एवं उत्तर की ओर डेढ़ डेढ़ अरत्नि व्यवहित देश में दो शंकु देवे। इन शंकुओं के स्थानों को अंश कहते हैं। चार कोने के शंकुओं मे सूत्र देवे से विषम चतुरस्र बनता है।

वेदी के दक्षिण कोने से लेकर दक्षिणपार्श्व में बत्तीस अंगुल देश में एक शंकु गाड़ना चाहिए। उस भूमि को संग्रह का मध्य समझना चाहिये। ॥ ७ ॥

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

वहाँ पर उन्नीस अंगुल परिमित प्रमाण से वेदी के मध्य में अर्धवृत बनाना चाहिए। उसे संग्रह कहते हैं।

इसी प्रकार उत्तर की ओर भी एक संग्रह बनाना चाहिये। तीन अंगुल गहरी वेदी होती है। संग्रह गहरे नहीं होते।

गार्हपत्य के उत्तर में जगह छोड़कर गार्हपत्य की तरह सभ्याग्नि का स्थान बनाना चाहिए। इसी प्रकार आहवनीय के उत्तर में गार्हपत्य की तरह आवसथ्याग्नि स्थान बनाना चाहिये। इसको ही प्राकृतिक विहार कहते हैं।

विशेष यह है कि गार्हपत्य के बीच के शंकु से उत्तर की तरफ अढ़ाई अरत्नि से व्यवहित देश में एक शंकु गाड़ना चाहिये। वह खर का मध्य भाग होगा वहाँ पर चौबीस अंगुल से युक्त दो अंगुल ऊँची चतुरस्र एक मिट्टी की छोटी वेदी बनानी चाहिये इसे खर कहते हैं। इसी प्रकार आहवनीय के उत्तर की ओर दूसरा खर बनाना चाहिए।

विमित के पीछे और उत्तर की तरफ भी पांच अरत्नि परिमित दो परिवृत्त बनाना चाहिये। उनमें से एक पत्नीशाला दूसरा दीक्षास्नान स्थान और धर्मपात्र के पाकस्थान भी हैं। दोनों परिवृतों में उत्तर दिशा में द्वार होना चाहिए। विमित के पूर्व द्वार के मध्य शंकु के पास से पूर्व दिशा में द्विपदात्मक तीन प्रक्रम व्यहित देश में शंकु गाड़ना चाहिये। इसे अन्तःपात्य कहते हैं।

सोमयाग में द्विपदात्मक से ही माप होता है। पद तो दस, बारह, या पन्द्रह अंगुल का होता है। दस अंगुल के पद के पक्ष में सदोपमण्डप का नाम अरत्नि द्वारा ही करना चाहिये। अन्तः पात्य से दक्षिण और उत्तर की तरह पन्द्रह, पन्द्रह प्रक्रमों में दो शंकु गाड़ना चाहिये। वे दोनों महावेदी की श्रोणी हैं। अन्तः पात्य के शंकु पास से पूर्व की तरफ द्विपदात्मक छत्तीस प्रक्रमों से व्यवहित देश में शंकु गाड़ना चाहिये। उस शंकु में दक्षिण और उत्तर की तरफ बारह बारह प्रक्रमों में दो शंकु देना चाहिये। इन दोनों स्थानों को अंश कहते हैं।

अन्तः पात्य शंकु से पूर्व की तरफ द्विपदात्मक डेढ़ प्रक्रम और आधे प्रक्रम से व्यहित देश में शंकु देना चाहिए। इस शंकु स्थान को सदोपमण्डप का पश्चिम प्रान्त समझना चाहिये। उस पश्चिम प्रान्त से दक्षिण और उत्तर की तरफ नव अरत्नि व्यवहित देश में दो शंकु देना चाहिये। यह सदोपमण्डप की श्रोणी है। सदोपमण्डप के पश्चिम शंकु के आगे नव नव अरत्नि व्यवहित दक्षिण और उत्तर की तरफ नव अरत्नि व्यवहित

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

देश में दो शंकु गाड़ना चाहिये। ये दोनों सदोपमण्डप के अंश हैं। सदोपमण्डप के पश्चिम और पूर्वदिशा में द्वार बनाना चाहिये। अन्तः पात्य से पूर्व की तरफ छः प्रक्रमों में शंकु देना चाहिये। उससे दक्षिण की तरफ पांच अरत्नि व्यवहित भूमि पर शंकु देवे। वह औदुम्बरी का स्थान है। छः प्रक्रमों के अन्त में निहित शंकु से पूर्व की तरफ इक्कीस अंगुल में शंकु देवे। उसके दक्षिण की तरफ एक सौ उन्तीस अंगुल में शंकु देवे। वह स्थान प्रशास्ता के धिष्ण्य का स्थान होगा। इसी प्रकार पृष्ठ्या से उत्तर की तरह नव अंगुल की दूरी पर शंकु देवे। वह होता के धिष्ण्य का मध्य है।

वेदी के मध्य में वर्तमान प्राची रेखा को पृष्ठ्या कहते हैं। उससे उत्तर की तरफ छत्तीस अंगुल के अन्तर स्थित चार शंकुओं को गाड़ना चाहिये। वे ब्राह्मणच्छंसि, पोता, नेष्टा, अच्छावाक नामक ऋत्विजों के धिष्ण्य का मध्य है। उन शंकुओं में अठारह अंगुल के चतुरस्र चार अंगुल उँचे स्थण्डिल मट्टी से बनाना चाहिये। उन्हें धिष्ण्य कहते हैं।

यूपावट देश से पश्चिम की तरफ एक पद को छोड़कर शंकु देना चाहिये। इस स्थान से पश्चिम की तरफ अरत्नि व्यवहित देश में शंकु देवे। उससे भी दक्षिण और उत्तर की तरफ अढ़ाई अढ़ाई अरत्नि व्यवहित देश में शंकु देने से वह उत्तर वेदी की श्रोणी है।

इसी प्रकार पूर्व से अंश समझना चाहिये। यह दसपद्या उत्तर वेदी होती है। वह वेदी चार अंगुल या एक हाथ उँची होनी चाहिये। उत्तर वेदी के पश्चात् द्विपदात्मक प्रक्रम से व्यवहित देश में हविर्धान के पूर्व द्वार के मध्य में शंकु देना चाहिये। उससे पश्चिम की तरफ दस प्रक्रमों पर पश्चिम द्वार के मध्य में शंकु देवे। द्वार शंकु से दक्षिण और उत्तर की तरफ पदद्वयात्मक पांच पांच प्रक्रम से व्यवहित देश में चार शंकुओं को गाड़ देना चाहिये। ऐसा करने पर दस प्रक्रम से परिमित, चतुरस्र चार स्तंभ वाला हविर्धान मण्डप बनता है।

हविर्धान मण्डप में बराबर के चार कोष्ठ की कल्पना कर आग्नेय कोष्ठ के बीच में चौबीस अंगुल परिमाण को ठीक समचतुरस्र बनाकर उसके चारों कोने के छोरों में प्रादेशमात्र चोड़े प्रादेशमात्र अन्तराल वाले एक एक हाथ के गढे खोदे। उनके ऊपर वारणा लकड़ी के बने हुए फलकों को पृथ्वी से सटे रख देना चाहिये ये गर्त, उपरव शब्द से कहे जाते हैं।

हविर्धान के वायव्य कोण से उत्तर में बराबर सूत्र से पदद्वयात्मक चार प्रक्रम से व्यवहित देश में शंकु देना चाहिये। वह आग्नीध्र का नैऋत्य कोण

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

है। उससे उत्तर की तरफ पांच अरत्नि व्यवहित देश में शंकु देवे। वह आग्नीध्र का वायव्य कोण है। उन शंकुओं से पूर्व की तरफ सीधे पांच अरत्नि व्यवहित देश में शंकु गाड़ना चाहिये। वे दोनों आग्नेय और ईशान कोण है। पांच अरत्नि परिमित चतुरस्र वाला आग्नीध्र बनाना चाहिये। उसके दक्षिण पूर्व में द्वार बनाना आवश्यक है। इसी प्रकार दक्षिण में आग्नीध्र के समसूत्र हो जाने से मार्जालीयागार को आग्नीध्र की तरफ बिना पूर्व द्वार के उत्तर की तरफ द्वार वाला बनावे और दोनों के बीच में अट्ठारह अंगुल परिमित दो धिष्ण्य बनावे और महावेदी के उत्तर दिशा में तीस अंगुल में शंकु गाड़े। उससे पूर्व चौतीस अंगुल से व्यवहित देश में शंकु गाड़ना चाहिये। उसे चात्वाल का मध्य समझना चाहिये। उसका बत्तीस अंगुल से परिमित चतुरस्र चात्वाल बनावे। उत्तर अंश से पीछे बारह प्रक्रमों में पृष्ठ्या से उत्तर की तरफ भी चौदह प्रक्रमों में उत्कर का मध्य समझना चाहिये। वहाँ पर छः अंगुल का गर्त बनावे। चात्वाल से उत्तर की तरफ पांच अरत्नि प्रमाण के पूर्व द्वार वाली शामित्रशाला होती है। हविर्धान मण्डप के ऊपर तीन छदियों से सदोमण्डप का उदगग्र नव छदियों से आच्छादन करे। सदोमण्डप के कोनों में चार स्तंभ होंगे। महावेदी के अवशिष्टांश का अच्छादन करे या न करे। उत्तर वेदी का तो आच्छादन किया जाता है। सदोमण्डप और हविर्धान के चारों तरफ भी आच्छादन होता है। तीन अंगुल गहरी महावेदी होती है।

—दौलतरामगौड

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

श्रौतयज्ञपात्रों और वेदियों का निर्माण प्रकार

महामहोपाध्याय पण्डित श्रीविद्याधरशास्त्रि पुत्र श्रीदौलतरामगौड वेदाचार्य

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

ग्रहपीठ, कुंडों तथा पद्मकुंड का निर्माण विधान

महामहोपाध्याय श्रीपण्डित विद्याधरशास्त्रिपुत्र श्रीदौलतरामगौड वेदाचार्य

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

(सूर्य पीठं[1])

(ग्रहों की आकृति वनाने का प्रकार)

एक अंगुल, सात यव और छः यूका को प्रकाल से नापकर मध्य से वृत्त बनावे तो द्वादशांगुलात्मक सूर्य का चेत्रफल होगा। १ अंगुल, ७ यव, ५ यूका और ४ लिक्षा का वृत्त वतावे। यह लघुपीठमाला का मत है।

---

(१) लघुपीठमालायाम्—सूर्यस्यार्काङ्गुलं वृत्तमेकाद्रीषुचतुः कृतम्। तद्व्यासार्धं तेन सम्यक् जायते नेत्रसुन्दरम् ॥ १ ॥
एक १ अद्रि ७ इषु ५ चतु ४ र्भिः क्रमेण अंगुल-यव-यूका-लिक्षाभिर्व्यासार्द्धम्। तद्द्विगुणो व्यासः ३।७।
चान्द्रं सिद्धाङ्गुलं वेदकोणं वेदाद्रिपक्षयुक् ॥ २ ॥ वेद ४ अद्रि ७ पक्ष २ क्रमेणाङ्गुलादिभिः इदं कोटिमानं भुजमानं च।
भौमस्याब्धिफलं त्र्यस्रं त्रिखाम्बुधिराहतम् ॥३॥ त्रि ३ ख० शून्य अम्बुधय ४ श्चत्वारोङ्गुलाद्याः, तै आहतं भौमस्य चतुरङ्गलं फलं त्रिकोणं पीठं त्रिकोणे त्रयो भुजाः समप्रमाणाः। तत्राधस्तना भूमिः उपरितनौ भुजौ तन्मानं ३।०।४।
चतुर्यवान्तरं वेदाङ्गुलं स्यात्तु भुजद्वयम् ऊर्ध्वाधस्तद्वयार्द्धश्च प्रत्येकं स्याच्चतुर्यवा।
भूमिः षड्यववेदाभ्यां भुजाभ्यां षट्त्रिकोणकम् तद्युक्तं बाणसमयं बुधपीठं प्रचक्षते ॥ ४ ॥
तर्काङ्गुलं गुरोः पीठं दस्रानलभुजद्वयम् ॥ ५ ॥ दस्रौ द्व्यङ्गुलौ द्वौ भुजौ अनलौ त्र्यङ्गुलौ द्वौ भुजौ कोटिसंज्ञौ तत्रैकभुजैककोट्योर्घातः फलं षडङ्गुलं गुरुपीठम् ॥
शुक्रस्य पीठपञ्चास्रं व्यासार्द्धं कु[१]न[७]गेषु[५]भिः व्यासेन वृत्ते पूर्वादिसमाज्याः पञ्चमन्घगाः। प्रोञ्छिते बाह्यतो वृत्ते नवाङ्गुलफलं मतम् ॥ ६ ॥
वेदा[४]ब्धि[४]वेदा[४]ब्धि[४]भूमिर्धनुः पीठं शनेर्भ्रमात् मध्यस्थचतुरस्रस्य मानहीनात् षडङ्गुलम्।
चतुरस्रे त्वपगते चतुर्दिक्षु चतुर्धनुः एकं धनुः फलं तत्र ग्राह्यं ह्रत्वा धनुस्त्रिकम् ॥ ७ ॥

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

(चन्द्र पीठ)

चार अंगुल, सात यव और दो यूका का गज लेकर पूर्व की तरफ एक लंबी सीधी रेखा दे और उतनी ही दक्षिण दिशा की तरफ, उत्तर की तरफ और पश्चिम दिशा की तरफ देने से चतुरस्त्र पीठ बन जाता है।

वेदाङ्गुलैर्वेदकोणे पूर्वतो रेखयोरिह तिर्यग् ह्यग्न्यम्भोधिवृद्धिरधो बाह्वर्धमानतः। वृत्तेद्वे राहुपीठं स्याच्छूर्पं सिद्धाङ्गुलं शुभम् ॥ ८ ॥

प्रथमत एकं चतुरस्त्रं तत्र भुजमानं ४।०।०। तदेव कोटिमानं ४।०।०। तत्र पूर्वयो रेखयोः तिर्यग् दक्षिणोत्तर द्वि २ अग्नयः त्रयः अंभोधयः ४, दक्षिणे अर्धम् १।१।६। उत्तरे अर्धम्—१।१।६। अंगुलयवयूकानां वृद्धिः। अधो भूमेरर्धं कृत्वा वृत्तद्वयं कार्यम्। एवं चोपरिभूमिः ६।३।४। अधोभूमिः ४।०।०। लंबः ४।०।०। अधोवृत्तव्यासार्धम्–१।०।०। तद्द्विगुणो व्यासः २।०।०।

पूर्वापरौ गतौ बाहूकोटिरर्द्धाङ्गुला भवेत् ऊर्ध्वमेकाङ्गुलं हित्वा हित्वा चाधः शराङ्गुलम्।

चतुरेकाङ्गुलयवं लग्नास्यं त्र्यस्त्रभारभ केतोर्ध्वजाभं कुण्डं स्याद् गजाङ्गुलमितं शुभम् ॥ ९ ॥

यावा भूमिः सप्तविंशाङ्गुलाब्धि यावावृत्तार्द्धावृत्ताऽन्यातिथेः स्यात्। त्रयोविंशस्तत्र लम्बाङ्गुलश्च राहोः शूर्पं कुण्डमेतद्विचित्रम् ॥

प्रकारान्तरपक्षः—सिद्धाऽङ्गुलो भवेल्लम्बः पश्चाद्भूमिर्नखाङ्गुला। पूर्वाऽविंशतिः प्रोक्ता शूर्पं स्यात् ऋजुकोणके ॥ इत्यनेन पश्चाद् वृत्तं नास्तीति ध्वनितम्।

संग्रहोऽर्द्धे सार्धरामेण चापेन्तर्ज्याहः स्याद्वृत्तपादो दिगंकात्। सूत्राद्रौद्राद्बाह्यमौर्व्यर्हमेवं वृत्तं दद्याज्ज्याः६गेवं परार्द्धम् ॥

इषुवेदमितेन दीर्घदोष्णा गजदोष्णा लघुतापि च त्रिषष्टिः। जिनलम्बगुणेन वार्द्धषट्त्रिभुविचार्धात्पूवदन्ति केतुकुण्डम् ॥

एकेन युग्मत्रिभिरङ्गुलीभिः परेण धृत्या च मिलेन दोष्णा। सुदीर्घवेदास्त्रमुशन्तिकुण्डं निगद्यतेऽथो द्विविधं शराभम् ॥

फाले लंबो भूश्च सिद्धाङ्गुलैस्तल्लम्बा यष्टिः पार्श्वयारेङ्गुलीभिः। वेदैर्वेदेषुभिश्चात्र भूः स्याद्धत्याभय्यप्यापता षट्त्रिपर्यैः ॥

नोट—देखिये–विशेष निर्णयसिन्धु-सटीक कृष्णंभट्टी पृ० १०९१ और लिखित ग्रहपीठमाला की टीका को।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

रूपनारायण मत से—३ अंगुल, ७ यव, २ यूका और ४ लिक्षा का एक गोलाकार वृत्त बनावे। तदनन्तर उस वृत्त के ठीक मध्य से दक्षिणोत्तर ७ अंगुल, छः यव और ५ यूका की एक लंबी रेखा दे। ऐसा करने से दो वृत्तार्ध होंगे। उसमें से पश्चिम हिस्से के वृत्तार्ध को मिटा देने से चौबीस अंगुलात्मक अर्ध चन्द्र हो जायगा।

(मंगल पीठ)

तीन अंगुल और चार यूका को गज से नाप कर उत्तर की तरफ एक सीधी रेखा दे। उस रेखा के अन्तिम सिरों से अर्थात् दोनों कोनें से अलग अलग एक एक टेढी रेखा उतनी देने से मंगल पीठ बन जाता है। या एक यूका, ५ यव और दो अंगुल लंबी दक्षिणाग्र रेखा दे। (दक्षिणाग्र या उत्तराग्र करे यह संस्काररत्नमाला का मत है)

मंगल पीठ का दूसरा प्रकार—३ अंगुल ४ यव और छः यूका की एक लंबी रेखा उत्तर दिशा की तरफ दे। तदनन्तर वायव्यकोण से एक टेढ़ी रेखा २ अंगुल, ४ यव और छः यूका की ठीक दक्षिण दिशा में दे। वैसे ही ईशानकोण से जो रेखा दे वह भी दक्षिण दिशा वाली रेखा में मिलाने से त्रिकोण पीठ बनेगा।

(बुध पीठ)

मध्य से चार यव छोड़कर एक रेखा दक्षिण से उत्तर की तरफ चार अंगुल की लंबी सीधी दे। वैसे ह '. चार अंगुल की मध्य रेखा से ४ यव छोड़कर उत्तर से दक्षिण की तरफ दे। तदनन्तर उत्तर दिशा की तरफ वाली रेखा के अन्तिम सिरे से दो यव पूर्व दिशा की तरफ और दो यव पश्चिम दिशा की तरफ बढ़ा दे। वैसे ही नीचे दक्षिण दिशा का दोनों रेखाओं को दक्षिण की तरफ बढ़ा दे। फिर पूर्व दिशा में बढ़ी २ यव वाली रेखा के अन्तिम सिरे से दो अंगुल छः यव की एक रेखा टेढ़ी दे जो उत्तर में मिले। वैसे ही पश्चिम की तरफ से रेखा दे। ऐसा करने से बुध पीठ बन जाता है।

रूपनारायण मत से—एक अंगुल, सात यव और छः यूका का एक गोलाकार वृत्त बनावे। तदनन्तर उस वृत्त के ठीक मध्य में एक लंबी रेखा दक्षिणोत्तर दे। फिर उस आधे आधे दो वृत्तों में से एक आधे वृत्त को मिटा देने से षडङ्गुलात्मक बुध पीठ बन जाता है। ॥ २ ॥

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

(गुरु पीठ)

दो अंगुल चार यव और दो यूका का एक गोलाकार वृत्त बनाकर उस वृत्त में चार अंगुल, चार यूका और दो लिक्षा का दूसरा वृत्त बनावे। तदनन्तर उस वृत्त में बराबर बराबर के सोलह चिन्ह कर विदिशा के पांचवे चिन्ह से प्रारंभ कर आठ पत्र बनाने से नव अंगुलात्मक पद्माकार आकृति वाला गुरु पीठ बन जाता है।

रूपनारायण मत से—मध्य से दो अंगुल की दक्षिण दिशा की तरह एक सीधी रेखा करे तदनन्तर पूर्व और पश्चिम की तरफ तीन तीन अंगुल की सीधी रेखा दे। फिर उत्तर दिशा की तरफ दो अंगुल की रेखा दे। ऐसा करने से दीर्घ चतुरस्त्र गुरु पीठ बन जाता है।

(शुक्र पीठ)

प्रकारान्तर—एक अंगुल, सात यव और पांच यूका का एक वृत्त बनकर उस वृत्त में पूर्व दिशा से दो अंगुल, दो यव और तीन यूका पर चिन्ह करने से पञ्चकोणात्मक शुक्र पीठ बन जायगा।

रूपनारायण मत से—तीन अंगुल, एक यव, दो यूका और चार लिक्षा को प्रकाल से पूर्व दिशा, पश्चिम और उत्तर दिशा से नाप कर बनाने से चतुष्कोण (चार कोन वाला) शुक्र पीठ बन जाता है।

प्रकारान्तर—छः यूका छः यव और दो अंगुल के प्रकाल से नापकर एक गोलाकार वृत्त बनावे। तदनन्तर उस वृत्त के पूर्व दिशा से तीन अंगुल २ यव और छः यूका पर एक एक चिह्न करे। अर्थात् कुल ५ चिह्न करे। फिर फी चिह्न से एक चिह्न छोड़कर तीसरे चिन्ह पर जो रेखा दी जायगी उस रेखा का नाप २ यूका, तीन यव और ५ अंगुल परिमित होगा। उसे बाहू कहते हैं। इसी तरह की ४ रेखा (बाहु) और दे। तदनन्तर कोणों को छोड़कर बाहुओं और वृत्त को मिटाने से ये पाच कोणात्मक शुक्रपीठ बन जायगा।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

प्रकारान्तर पक्ष—एक अंगुल ७ यव और पांच यूका का एक वृत्त बनाकर उस वृत्त में बराबर बराबर के पांच भाग करने से शुक्रपीठ बन जाता है। यह पक्ष लघुपीठमाला का है।

(शनि पीठ)

चार अंगुल, चार यव, चार यूका और चार लिक्षा का एक गोलाकार वृत्त बनाकर उस वृत्त के ठीक मध्य से एक जीवा अर्थात् लंबी रेखा छः अंगुल, तीन यव और ५ यूका की (या ६ । ६ । ५) देने से धनुषाकार पीठ बन जाता है।

अथवा—छः अंगुल, ३ यव और ५ यूका की दक्षिणोत्तर एक जीवा-रेखा दे। तदनन्तर ७ अंगुल, १ यव और तीन यूका के नाप की रस्सी या प्रकाल द्वारा नापने से धनुषाकार शनि पीठ हो जाता है। या—७।१।३। की दक्षिणोत्तर रेखा दे। तदनन्तर ६।३।५ को देने से धनुषाकार शनिपीठ बन जाता है।

अथवा—छः यूका ५ यव और दो अंगुल का वृत्त बनाकर उस वृत्त के ठीक मध्यसे छः यूका ५ यव और तीन अंगुल की एक लंबी रेखा देने से शनिपीठ बन जाता है।

प्रकारान्तर पक्ष—२ अंगुल, ५ यव, ४ यूका और ४ बालाग्र का एक गोलाकर वृत्त बनाकर उस वृत्त के भीतर ठीक मध्यमें—३ अंगुल, ६ यव और ४ यूका के परिमाण ज्या देने से शनि पीठ बन जाता है।

प्रकारान्तर पक्ष—एक वृत्त ४ अंगुल, ४ यव, ४ यूका और ४ लिक्षा का बनाकर उस वृत्त में एक चतुरस्र बनावे। (उस चतुरस्र की भुजा ६।३।५ होगी और कोटी भी ६।३।५। होगी। अर्थात्—बराबर का चतुरस्र बनेगा)। तदनन्तर वृत्त में जो चतुरस्र बना है उस चतुरस्र से बाहर और वृत्त के भीतर पूर्व दिशा, पश्चिम दिशा, दक्षिण दिशा और उत्तर दिशा में जो जगह निकलती है उन जगहों में

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

(शनि पीठ)

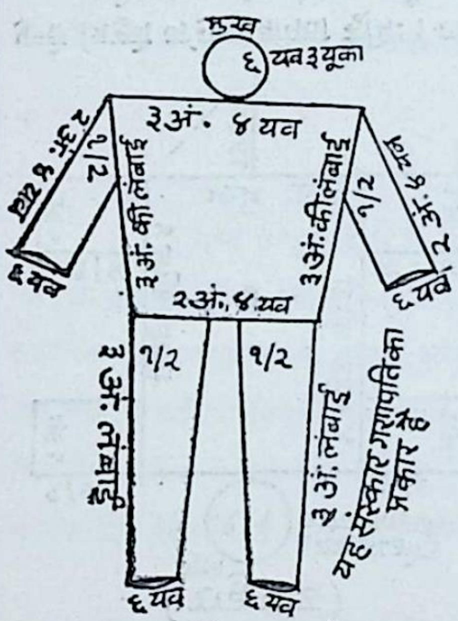

तीन जगहों को (अर्थात्—वृत्त के सहित जगहों को और चतुरस्र की तीन रेखाओं को मिटाने से धनुषाकार पीठ बन जायगा।

अथवा— २ अंगुल की भुजा और तीन अंगुल की कोटी बना कर शनिपीठ बना सकता है। यह लघुपीठमाला का मत है।

*प्रकारान्तर—(१) मुख का व्यास छः यव तीन यूका होगा। अर्थात्--छः यव और तीन यूका का एक गोलाकार वृत्त बनावे। उसी में आंख, कान आदि बनावे। (२) तदन्तर दक्षिणोत्तर लंबी रेखा तीन अंगुल और चार यव की करे। उसी को पूर्व का भू कहते हैं। (३) फिर मध्य की लंबाई तीन अंगुल की होती हुई अन्त में सकरी होगी। (४) कन्धे की चौड़ाई एक अंगुल और दो यव की होगी। (५) हाथ की लंबाई सवा दो अंगुल की होगी। (६) कटी भाग की लंबाई दक्षिणोत्तर दो अंगुल चार यव की होगी। (७) जांघ की एक अंगुल दो यव का होगी। (८) चरण की लंबाई तीन अंगुल की होगी। (९) चरण का भाग ६ यव का होगा।

---

* सार्धत्रयाङ्गुलमिता ३।४। पूर्वभागे भूः। तत्पश्चिमे भागे सार्धाङ्गुलद्वयमितं २।४ मुखम्। मध्ये—त्र्यङ्गुलमितो लम्बः। तत्पश्चिमभागे चरणौ कार्यौ। सपादमेकाङ्गुला भूः १।२। षड्यवोन्मितं ६ मुखम्। त्र्यङ्गुलमितो लंबः ३। एतादृशो दक्षिणचरणः। तथैव वामः। सपादमेकाङ्गुला १।२ भूः। षड्यवोन्मितं मुखम, सार्धद्वयमिताङ्गुलो लम्बः। एतादृशो दक्षिणहस्तः। तथैव वामः। तत्पूर्वभागे षड्यवयूकात्रय ६।३ मितेन। कर्कटेन वृत्तं तच्छिरः। एवं कृते सति द्वाविंशत्यङ्गुलक्षेत्रफलात्मकं २२ नराकृतिः शनिमण्डलं भवति।

क्षेत्रफल—(क) उदरक्षेत्रफल ९ अंगुल। (ख) मुख का क्षेत्रफल २ अंगुल। (ग) चरण का क्षेत्रफल ६ अंगुल। (घ) हाथ का क्षेत्रफल ५ अंगुल। कुल क्षेत्रफल जोड में २२ होगा।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

(राहु पीठ)

चार अंगुल पूर्व, चार अंगुल पश्चिम, चार अंगुल दक्षिण और चार अंगुल उत्तर रेखा देकर एक चतुरस्र समकोण बनाकर उस चतुरस्र के बाहर ईशानकोण और अग्निकोण में २ अंगुल ३ यव ४ यूका का आधा १।१।६। दक्षिण दिशाकी तरफ और १।१।६ उत्तर दिशा की तरफ बढ़ा दे। तदन्तर बढ़े हुए भागों से क्रम से एक एक टेढी रेखा वहाँ से नैर्ऋत्यकोण में और एक टेढ़ी रेखा वायव्यकोण में बढ़ा दे। फिर उस चतुरस्र का नीचे की (पश्चिम की) तरफ दो भाग कर (अर्थात् दो दो अंगुल पर मध्यकर) उनमें दो वृत्तार्ध अलग २ बनावे। वृत्त का व्यासार्ध १।०।० होगा अलग अलग। अर्थात्–प्रथम भाग में एक वृत्तार्थ दूसरे भाग में दूसरा वृत्तार्ध बनाकर भीतर का चतुरस्र मिटा देने से शूर्पाकार पीठ होता है।

(राहु पीठ)

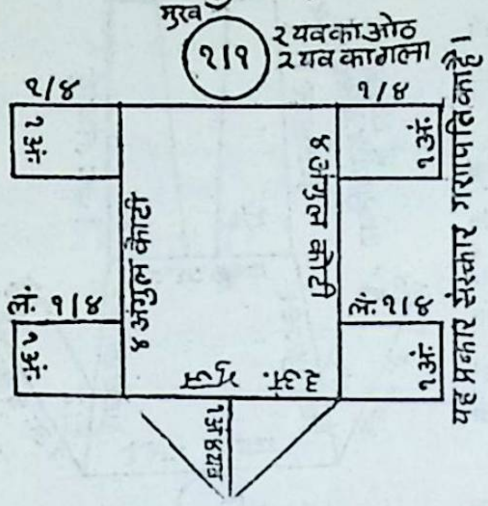

‡ प्रकारान्तर पक्ष—(१) मुख-एक अंगुल यवाधिक व्यासार्ध से एक वृत्त बनावे। मुख और उदर मध्य में दो यव का एक चतुरस्र चारो तरफ से गला होगा। मुख के आगे दो यव का ओष्ठ रहेगा। (२) तीन अंगुल की भुज रहेगी। (३) हाथ की-चौडाई एक अंगुल चार यव

‡ तत्र उदरे अंगुलत्रयमितो भुजः। अंगुल चतुष्टयमिता कोटिः। ऊर्ध्वभागे पार्श्वयोः सार्द्धाङ्गुलदीर्घौ एकाङ्गुलविस्तृतौ द्वौ करौ। तावन्मितावधो भागे पार्श्वयोर्द्वौ चरणौ। यवाधिकैकाङ्गुलव्यासार्धेन कृतं मण्डलं मुखम्। मुखोदरयोर्मध्ये यवद्वयमितश्चतुरस्रो गलः। मुखादग्रे यवद्वयेनोष्ठौ पुच्छे त्रिभुजे अंगुलत्रयमिता भूमिः। सार्धाङ्गुलो लम्बः। एवं कृते पञ्चविंशत्यङ्गुलक्षेत्रफलात्मकं मकराकृति राहुमण्डलं भवति।

क्षेत्रफल—(क) भुज और कोटी का क्षेत्रफल १२ अंगुल। (ख) मुख का क्षेत्रफल ४ अंगुल। (ग) ओष्ठ और गले का–एक अंगुल। (घ) हाथ और चरण का क्षेत्रफल ६ अंगुल। कुल जोड़ २५ क्षेत्रफल होगा।

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

की होगी। (४) कोटी–चार अंगुल की होगी। (५) नीचे पूछ ठीक मध्य में (अर्थात्—पुच्छे त्रिभुजे अंगुलत्रयमिता भूमिः) त्रिभुज करने पर ठीक मध्य से एक लंबी रेखा उत्तर दिशा की तरफ जो होगी वह तीन अंगुल की होगी।

(प्रकारान्तर पक्ष लघुपीठमाला और संस्काररत्नमाला से)

(१) मध्य से पूर्व दिशा में चार अंगुल रेखा सीधी दे। (२) दक्षिण दिशा में—चार अंगुल सीधी रेखा दे। (३) पश्चिम दिशा में चार अंगुल की सीधी रेखा दे। (४) और उत्तर दिशा में—चार अंगुल की सीधी रेखा दे। ऐसा करने से एक चतुरस्र तय्यार हो जायगा। तदनन्तर उस चतुरस्र के बाहर अग्निकोण में दक्षिण की तरफ एक सीधी रेखा दे जो रेखा छः यूका, १ यव और एक अंगुल की हो। उस रेखा के अन्तिम सिरे पर चिन्ह करे। इसी तरह उधर की तरफ (ईशानकोण में) छः यूका, १ यव एक अंगुल की सीधी रेखा बढ़ा दे। फिर नैर्ऋत्यकोण से एक टेढ़ी रेखा दे जो दक्षिण दिशा (अग्निकोण) में बढ़े हुए भाग के अन्तिम चिन्ह पर मिले। वैसे ही–वायव्य कोण से एक टेढ़ी रेखा दे जो उत्तर दिशा में (ईशान कोण) में बढ़े हुए भाग के अन्तिम सिरे में मिले।

तदनन्तर—उस चतुरस्र के नीचे के हिस्से में (अर्थात्—वायव्य और नैऋत्य वाले में) अर्थात् पश्चिम दिशा में उस चतुरस्र का दो दो अंगुल का मध्य कर उस मध्य से एक अंगुल के व्यासार्ध पर फिर चिन्ह करे। ऐसा करने पर प्रकाल द्वारा अलग अलग दो वृत्त बनावे। फिर चतुरस्र के भीतर का अर्धवृत्त और चतुरस्र मिटाने से शूर्पाकार बनेगा।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

(केतु पीठ)

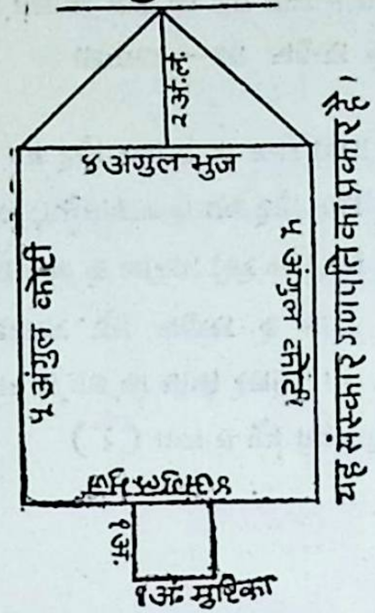

(केतु पीठ)

पूर्व दिशा से पश्चिम दिशा में एक लंबी रेखा आठ अंगुल की दे। तदनन्तर पूर्व दिशा से चार यव अर्थात् आधा अंगुल हटाकर दूसरी लंबी रेखा उस रेखा से हटाकर दक्षिण दिशा की तरफ दे। फिर पश्चिम दिशा से दक्षिणवाली रेखा से अधोभाग से पाच अंगुल पर चिन्ह करे। और पूर्व दिशासे अर्थात् ऊपर से एक अंगुल छोड कर उसी रेखापर चिन्ह करे। एक अंगुल से एक सीधी रेखा चार अंगुल, एक यव की दक्षिण तरफ वैसे ही पांचवें भागसे दूसरी रेखा टेढी दे जो ऊपर वाली रेखा ४ अंगुल और १ यव में मिले ऐसा करने से मध्यवाली रेखा होगी। केतु पीठ बन जाता है।

(१) प्रकारान्तर पक्ष—(१) कोटी पांच अंगुल लंबी। (२) वज्र का त्रिकोण-लंबाई दो अंगुल (३) भुज चार अंगुल का। (४) सम चतुरस्त्र एक अंगुल की मध्य में मुष्टिका।

---

(१) तत्र खङ्गाकृतौ फलकस्य चतुरङ्गुलो भुजः। पञ्चाङ्गुला कोटिः। खङ्गाग्रत्रिकोणे अंगुलद्वयमित्त लम्बः। चतुरङ्गुला भूमिः। उपरि समचतुरस्रा अङ्गुलैकामुष्टिका। एवं कृते पञ्चविंशत्यङ्गुलक्षेत्रफलात्मकं खङ्गाकृति केतुमण्डलं भवति।

क्षेत्रफल—(क) भुज और कोटी का २० (ख) त्रिभुज का क्षेत्रफल ४ (ग) मुष्टिका क्षेत्रफल १ कुल २५ क्षेत्रफल हुआ।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

कुण्डों के बनाने में सहायक यन्त्र

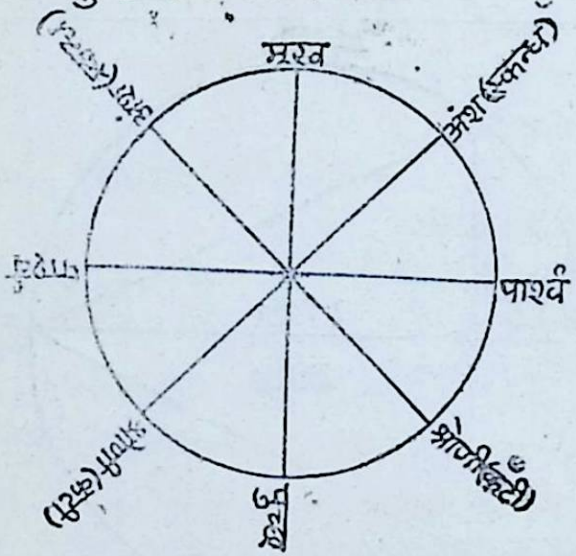

(सूर्य कुण्ड)

२७ अंगुल ६: यूका के आधे को प्रकाल द्वारा नाप कर मध्य विन्दु से एक गोलाकार वृत्त बनावे । इस कुण्ड नाम सूर्य कुण्ड होगा ।

(चन्द्र कुण्ड)[1]

३३ अंगुल ७ यव और ४ यूका का आधा १६ । ७ । ६ । ५ । को प्रकाल से नापकर मध्य विन्दु से एक गोलाकार वृत्त बनावे । तदनन्तर उस वृत्त में (क) ईशान कोण से एक सीधी रेखा दे जो अग्निकोण में मिले । (ख) अग्निकोण से एक सीधी रेखा दे जो नैर्ऋत्य कोण में मिले । (ग) नैर्ऋत्यकोण से एक सीधी रेखा दे जो वायव्यकोण में मिले । (घ) वायव्यकोण से एक सीधी रेखा दे जो ईशानकोण में मिले । ऐसा करने से वृत्त के भीतर एक चतुरस्र बनेगा उस चतुरस्र को चन्द्रकुण्ड से कहा जायगा ।

---

(१) ३८ अंगुल दो यव और तीन यूका का आधा कर प्रकाल से नापकर मध्य विन्दु से एक गोलाकार वृत्त करे। उस वृत्त में दिक् साधनार्थ पूर्व दिशा (मुख) से एक लंबी लकीर दे जो पश्चिम (पुच्छ) दिशा में मिले । तदनन्तर उत्तर दिशा (वामपार्श्व) से एक लकीर लंबी दे जो दक्षिण दिशा (दक्षपार्श्व) में जाकर मिले । फिर दक्षिण से उत्तर वाली जो रेखा (लकीर) दिक् साधन के लिए दी है उस लकीर का चार भाग

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

(भौम कुण्ड)

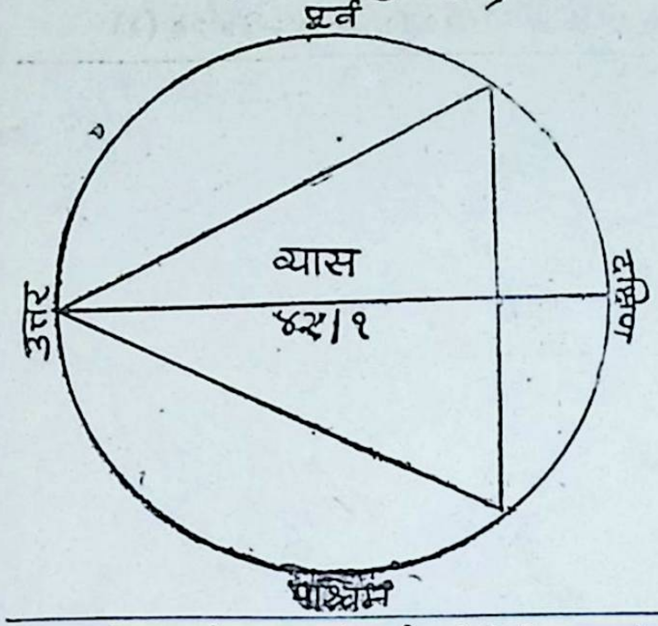

(मंगल कुण्ड)

४२ अंगुल तथा १ यव का आधा कर प्रकाल द्वारा मध्य विन्दु से एक गोलाकार वृत्त बनावे। तदनन्तर पूर्व दिशा (मुख) से एक सीधी रेखा दे जो पश्चिम दिशा (पुच्छ) में मिले। फिर दक्षिण दिशा (दक्षपार्श्व) से एक सीधी रेखा दे जो उत्तर दिशा (वामपार्श्व) में मिले। फिर ईशान कोण से एक सीधी रेखा दे जो वायव्य कोण में जाकर मिले। वायव्य कोण से एक टेढ़ी रेखा दे जो दक्षिण दिशा में मिले। ईशान कोण से एक टेढ़ी रेखा दे दक्षिण दिशा में मिले। ऐसा करने से त्रिकोण कुण्ड बन जाता है।

अथवा—नैर्ऋत्य कोण से एक सीधी रेखा दे जो वायव्य कोण में मिले। नैर्ऋत्य कोण से एक टेढ़ी रेखा दे जो उत्तर दिशा में मिले। वायव्य कोण से एक टेढ़ी रेखा दे जो उत्तर दिशा में मिले। ऐसा करने से त्रिकोण कुण्ड बन जाता है।

कर उसके चतुर्थ भाग पर (अर्थात् तीसरे चिन्ह पर) प्रकाल को रख उत्तर दिशा से दूसरा वृत्त प्रथम वृत्त की तरह बनावे। (यह ध्यान रखे की दूसरे वृत्त की रेखा पुच्छ (पश्चिम दिशा) और मुख (पूर्व दिशा) की रेखा को स्पर्श करती आ रही है या नहीं) तदनन्तर तीसरे चिन्ह ॥ ६ ॥

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

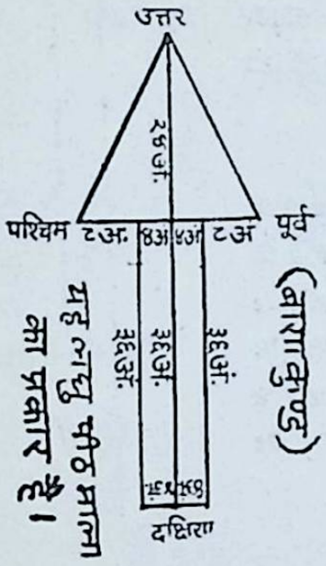

(बुध कुण्ड का प्रथम प्रकार)

मध्य विन्दु से चार अंगुल हटाकर दक्षिण दिशा की तरफ एक रेखा सीधी ३६ अंगुल की दे। [अर्थात् मध्य विन्दु से चार अंगुल हटाकर १८ अंगुल इधर और १८ अंगुल उधर रेखा देने से ३६ अंगुल होगा] वैसे ही मध्य विन्दु से चार अंगुल हटाकर उत्तर दिशा की तरफ एक रेखा सीधी दे जो ३६ अंगुल की होगी।

तदनन्तर—दोनों रेखाओं की समाप्ति पर उत्तर दिशा की ओर एक रेखा पूर्व से पश्चिम दिशा की तरफ दे जिसका नाप २४ अंगुल होगा।

[तात्पर्य यह है कि २४ अंगुल की जो रेखा दी जायगी उस रेखा का आधा १२ अंगुल होगा। उस बारह अंगुल के मध्य को मध्य विन्दु वाली रेखा के अन्तिम सिरे पर रखने पर पूर्व दिशा की तरफ १२ अंगुल रेखा का नाप होगा और पश्चिम दिशा की तरफ भी १२ अंगुल रेखा का नाप होगा। यों निश्चयात्मक हो जाने पर मध्य विन्दु से चार अंगुल हटाकर दक्षिण दिशा की तरफ जो ३६ अंगुलात्मक रेखा दी है और ४ अंगुल हटाकर उत्तर दिशा की तरफ जो रेखा दी है उन रेखाओं के मध्य में चार २ अंगुल और आ जायगा। ऐसी स्थिति में दोनों छोर में अलग अलग आठ आठ अंगुल बचेगा।] इसी प्रकार अन्य प्रकारों में व्यवस्था समझ

से एक सीधी रेखा पूर्व दिशा और पश्चिम दिशा की तरफ देने से अर्धचन्द्र (चन्द्रमा) कुण्ड बन जाता है। तात्पर्य यह है कि—यहाँ पर जो दो वृत्त बनाये गये हैं उस दूसरे वृत्त से ही अर्धचन्द्र बनेगा। प्रथम वृत्त के मध्य से नहीं बनेगा।

अथवा—एक कुण्ड पक्ष में वृत्त का दिक् साधन कर उस वृत्त में दो चिन्ह और करने से चार भाग होंगे। उसके तीसरे चिन्ह से पूर्व दिशा की तरफ दूसरा वृत्त बनावे। तदनन्तर तीसरे चिन्ह से ही दक्षिणोत्तर एक सीधी रेखा देने से अर्धचन्द्र कुण्ड बन जाता है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

लेनी चाहिये] फिर मध्य विन्दु में एक रेखा सीधी दे जो दोनों रेखाओं के बराबर के नाप की हो । इस तरह कुल लंबी ३६ अंगुलात्मक तीन रेखा हुई ऐसा पूर्ण ज्ञान होने पर मध्यवाली रेखा के अन्तिम सिरे से एक रेखा सीधी उत्तर दिशा की तरफ २४ अंगुल की दे।

तदनन्तर—पूर्व दिशा से पश्चिम दिशावाली रेखा के दोनों कोने से एक एक टेढ़ी रेखा दे जो कि उत्तर दिशा में जाकर मिले ऐसा करने से बाण कुण्ड बन जाता है।

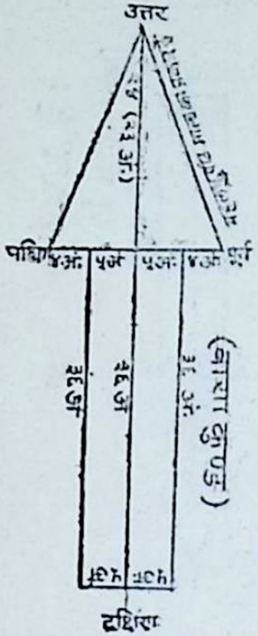

(दूसरा प्रकार)

मध्य विन्दु से ५ अंगुल दक्षिण दिशा की तरफ हटाकर एक सीधी रेखा दे जो रेखा ३६ अंगुलात्मक होगी। तद्वत् मध्यविन्दु से ५ अंगुल हटाकर उत्तर दिशा की तरफ एक रेखा सीधी ३६ अंगुलात्मक देवे। अर्थात्—मध्य विन्दु से ५ अंगुल हटा कर पूर्व दिशा की तरफ ३६ अंगुल की . एक सीधी रेखा दे। तद्वत् मध्य विन्दु से पश्चिम दिशा की तरफ ५ अंगुल हटाकर ३६ अंगुल की एक रेखा सीधी दे। तदनन्तर—उत्तर दिशा की तरफ मध्य विन्दुवाली रेखा को २३ अंगुल या २४ अंगुल एक सीधी रेखा उत्तर दिशा की तरफ बढ़ा दे। फिर उत्तर दिशा की तरफ जहाँ ३६ अंगुलात्मक रेखायें समाप्त हो चुकी हैं वहाँ से पूर्व दिशा से पश्चिम दिशा की तरफ १८ अंगुल की एक सीधी रेखा दे। फिर इस १८ अंगुल की रेखा के दोनों छोर से एक एक टेढी रेखा दे जो उत्तर दिशा में मिले। ऐसा करने से प्रकारान्तर बाण कुण्ड बनेगा।

तीसरा प्रकार कुण्ड रत्नावली का—

५८ अंगुल और ७ यका के आधे को प्रकाल से नाप कर मध्यविन्दु से ४ अंगुल, ५ यव और ५ यूका हटाकर एक सीधी रेखा दक्षिणोत्तर (पूर्व दिशाकी तरफ) दे। जिसकी लंबाई ३८।३।५।१।२।४। अंगुल होगी। जिसे 'दण्डवृहज्ज्या' शब्द से कह सकते हैं। तद्वत्—मध्य विन्दु से दक्षिणोत्तर (पश्चिम दिशाकी तरफ) ५ अंगुल, ५ वय और ५ यका हटाकर एक सीधी रेखा दे। जिसका नाप ३८।५।१।२।४ अंगुल होगा।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

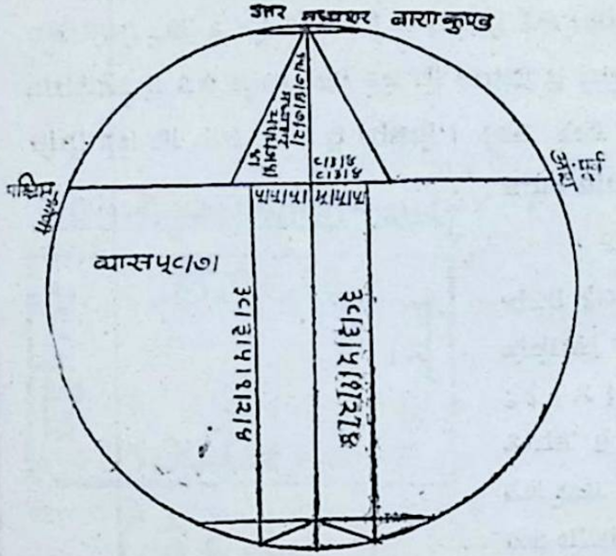

तदनन्तर मध्यविन्दु में एक रेखा दक्षिणोत्तर दे जो रेखा पूर्व रेखाओं के बराबर हो अर्थात् ३८।५।१।२।४ अंगुल की। अर्थात् तीनों रेखायें बराबर बराबर की हुई ऐसा निश्चय हो जाने पर उत्तर दिशा की तरफ मध्य रेखा की समाप्ति पर वायीं तरफ से ८ अंगुल, ३ यव और ४ यूका की एक रेखा दे। ७ यव की एक सीधी रेखा पूर्व से पश्चिम की तरफ दे। दूसरी दाहिनी तरफ ८ अंगुल ३ यव और ४ यूका की एक रेखा दे। (अर्थात्—वृत्त का आठ भाग कर पूर्व-मुख, अग्नि कोण अंश (स्कन्ध) दक्षिण पार्श्व, निर्ऋतिकोण-श्रोणी (कटी) पश्चिम—पुच्छ, वायव्य श्रोणी (कटी) उत्तर पार्श्व, ईशान अंश (स्कंध) तरफ—मुख (पूर्व दिशा) के समीप स्कन्ध से एक सीधी रेखा दे जो पुच्छ के समीप श्रेणी (कटि) में मिले। उस रेखा का मध्य और मध्यविन्दु से जो रेखा की समाप्ति हुई है-मध्य एक होगा। इसके मध्य से पूर्व दिशा की तरफ ८ अंगुल ३ यव और ४ यूका पर एक चिन्ह करे। वैसे ही मध्य से पश्चिम की तरफ ८ अंगुल ३ यव और ४ यूका पर चिन्ह करे) फिर उत्तर दिशा की तरफ पार्श्व का वायें का आधा और दाहिने के आधे पर एक रेखा दे। तद्वत् दक्षिण की तरफ दे। फिर मध्य विन्दुवाली रेखा के अन्तिम सिरे से एक सीधी रेखा जो उत्तर दिशा की तरफ :जाय। जिस का नाम १५।७।४।७।२।४ है। यदि मध्यशर को २।१।६।७।५।४ को १५।७।४।७।२ से घटा दे तो उपर का हिस्सा रेखा का नाप हुआ।

तदन्तर दाहिनी तरफ (दक्षिण तरफ) पार्श्व का चार भाग करे। आदि के दो भाग छोड़ कर मध्य के भाग अन्तिम सिरे से दक्षिण दिशा वाली रेखा के अंतिम सिरे से एक टेढ़ी रेखा जो मध्य के अष्टास्त्रिज्या के भीतर मध्यवाली रेखा के कोने में मिले। वैसे ही उत्तर वाली रेखा के अन्तिम

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

सिरे से एक टेढ़ी रेखा दे। फिर मध्य की बची रेखा मिटा दे। और वृत्तादि मिटाने से बाण कुण्ड बनेगा।

(गुरु कुण्ड)

(गुरू कुण्ड)

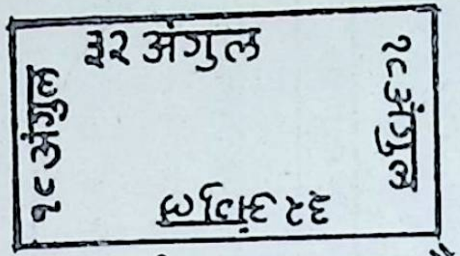

यह लघुपीठ माला का प्रकार है।

३६ अंगुल, ३ यव और ७ यूका का आधा (१८।१।७।४) कर प्रकाल से नापकर मध्य विन्दु से एक गोलाकार वृत्त बनावे। तदनन्तर वृत्त के बराबर बराबर के चौबीस चिन्ह कर ७ चिन्ह को छोड़ कर एक रेखा सीधी (पूर्व दिशा की तरफ) दक्षिणोत्तर वृत्त के भीतर दे इस रेखा का नाप ३१ अंगुल, ४ यव, ६ यूका, २ लिक्षा और ५ बालाग्र होगा। वैसे ही एक सीधी रेखा वृत्त के भीतर दे जिसका नाप ३१। ४। ६। २। ५। होगा। सात रेखा छोड़कर (पश्चिम दिशा की तरफ) दक्षिणोत्तर दे। फिर दोनों कोनों को (जिसके मध्य में तीन तीन रेखा रहेगी) रेखा द्वारा मिला दे। इन दो रेखाओं का नाप अलग अलग १७ अंगुल, १ यव, ७ यूका और ४ लिक्षा होगा।

तात्पर्य यह है कि—दक्षिण दिशा के समीप दक्षपार्श्व से एक सीधी रेखा दे जो उत्तर दिशा के समीप वामांश में मिले। जिसका नाप (३१। ४। ६। २। ५) होगा। फिर दक्षश्रोणी से एक रेखा सीधी देंगे जो वाम पार्श्व में मिलेगी। जिस रेखा का नाप (३१। ४। ६। २। ५) होगा। जिसको 'वृहज्जा' से पुकारा जाता है। तदनन्तर वामपार्श्व से एक सीधी रेखा देंगे जो वामांश में मिलेगी जिसका नाम १८। १। ७। ४ होगा जिसको 'लघुज्या' से कहा जाता है। फिर दक्षश्रोणी से एक सीधी रेखा दें जो दक्षपार्श्व में मिलेगी इस रेखा का नाप १८। १। ७। ४ है जिसे लोग 'लघुज्या' कहते हैं। ऐसा करने से आयत चतुरस्र गुरु कुण्ड बन जाता है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

(दूसरा प्रकार)

जो रेखा ऊपर ३१। ४। ६। २। ५। की है वह इस दूसरे प्रकार में ३२ अंगुल की रहेगी जिसे 'वृहज्ज्या' शब्द से कहा जाता है। दूसरी रेखा जो ऊपर १८।१।७।४ की कही है वह यहाँ दूसरे प्रकार में १८ अंगुल की कही है जिसे 'लघुज्या' शब्द से कह सकते हैं।

(शुक्र कुण्ड)

३१ अंगुल और १ यव के आधे व्यास को प्रकाल से नापकर एक वृत्त गोलाकार बनाकर उस वृत्त के बराबर बराबर पांच भाग कर (क) पूर्व दिशा से एक टेढ़ी रेखा दक्षपार्श्व में मिला दे। (ख) दक्षपार्श्व से एक टेढ़ी रेखा नैर्ऋत्य कोण में मिला दे। (ग) नैर्ऋत्य कोण से एक सीधी रेखा वामश्रोणी में मिला दे। (घ) वामश्रोणी से एक टेढ़ी वामांश में मिला दे। (ङ) वामांश से एक टेढ़ी रेखा पूर्व दिशावाली रेखा में मिला दे। ऐसा करने से पञ्चास्र कुण्ड बन जाता है।

(दूसरा प्रकार)

एक चतुरस्र २४ अंगुल का बनाकर उस चतुरस्र के बाहर चारों दिशाओं में पूर्व, पच्छिम, दक्षिण, उत्तर २४ अंगुल का सातवाँ भाग प्रत्येक दिशा में बढ़ाकर चतुरस्र को मध्य और चतुरस्र के बाहर के बढ़े हुए हिस्से में प्रकाल रख एक वृष गोलाकार बनाकर पूर्वोक्त व्यवस्था से ५ रेखा करने से पञ्चास्र कुण्ड बन जाता है।

(शनि कुण्ड)

मध्य केन्द्र से २९।२।५ के आधे से (१४।५।२।) से एक गोलाकार वृत्त बनाकर उस वृत्त के दक्षपार्श्व को केन्द्र मानकर दक्षिण दिशा को केन्द्र मानकर प्रथम वृत्त के आधे से प्रकाल घुमाने से अर्थात् प्रथम वृत्त के मध्य में पिनसिन रखे दक्षिण दिशा में प्रकाल का शंकु रखकर घुमा देने से दूसरा वृत्त बनेगा। तात्पर्य यह है कि दूसरे वृत्त का आधा भाग प्रथम वृत्त के आधे में चला जायगा। फिर उन दोनों वृत्तों में ज्या दक्षिणोत्तर

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

(शनि कुण्ड)

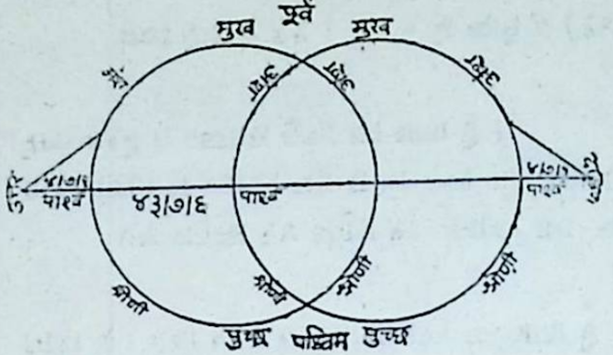

मध्य से दे। तदनन्तर दोनों वृत्तों के बाहर मध्य हिस्से से ४ अंगुल, ७ यव और १ यूका वायीं तरफ और ४ अंगुल, ७ यव और १ यूका दाहिनी तरफ बढ़ा दे। इस पूर्ण रेखा का नाप ५३ । ५ । ७ होगा। और केवल दोनों तरफ का मिलाकर षष्ठांश ९ । ६ । १ होगा। अर्थात्—५३ । ५ । ७ । से–९ । ६ । १ घटा देंगे तो भीतर वृत्तों की ज्या का नाप ४३ । ७ । ६ होगा। फिर वायें वृत्त के आठ भाग बराबर बराबर के करे। (१) पूर्व दिशा को मुख कहे। (२) अग्निकोण को अंश (स्कन्ध) कहे। (३) दक्षिण दिशा को पार्श्व कहे। (४) निर्ऋतिकोण को श्रोणी कहे। (५) पश्चिम दिशा को पुच्छ कहे। वायव्यकोण को श्रोणी (कटी) कहे। (६) उत्तर दिशा को पार्श्व कहे। ईशान को अंश स्कन्ध कहे। इसी प्रकार दाहिने वृत्त में भी आठ भाग की कल्पना करे।

तदनन्तर—वायें पार्श्व में बढ़ी रेखा (४।७।१) के अन्तिम सिरे से एक टेढी रेखा दे जो अंश और पार्श्व का जो मध्य है उसमें मिले। वैसे ही दाहिने तरफ रेखा (४।७।१) के अन्तिम सिरे से अंश और पार्श्व का जो मध्य हो उस मध्य रेखा में मिला दे। फिर कारीगर से कहकर कुण्डरत्नावली के नकशे (सिद्धरूप को) को दिखा कर ऊपरी भाग में अर्थात् पार्श्व और अंश

नोट—कुण्डरत्नावली में जो १ श्लोक है उसकी जगह 'मध्याद् व्यासाग्नि ३ भागे स्वरविलवविहीने कृते' ऐसा पढ़ा जाय तो अच्छा मालुम होता है। व्यास २६।२।४ का तृतीयांश निकाल कर ९।६।१ को द्वादशांश–अर्थात् स्वमति व्यास का (२९।२।४) का जो द्वादशांश हो उसको तृतीयांश में घटा दे तो ७।२।५ होगा।

[(२) २६।२।४। का आधा १४।५।२ हुआ १४।५।२ को २९।२।४ में जोड़ेगें तो ४३।७।६ होगा। अर्थात्—सार्द्धव्यासार्ध होगा। उसमें षष्ठांश जोड़ेगें तो ९।६।१ को ५३।५।७ होगा। इतनी बड़ी वृत्तों में और बाहर ज्या होगी। २९।२।४ का चतुर्थांश ७।२।५ होगा।]

॥ ९ ॥

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

के मध्य में जो रेखा टेढी दी है वहाँ से घनुष के रूप को कुछ उठा दे और दूसरी तरफ वृत्त के ऊपरी भाग से स्कन्घ और पार्श्व के मध्य वाली टेढ़ी रेखा से घनुष का आकार बनावे। फिर सब नीचे के भाग को मिटा देने से घनुषाकार कुण्ड बन जाता है। यही पक्ष उत्तम है।

(शनि कुण्ड)

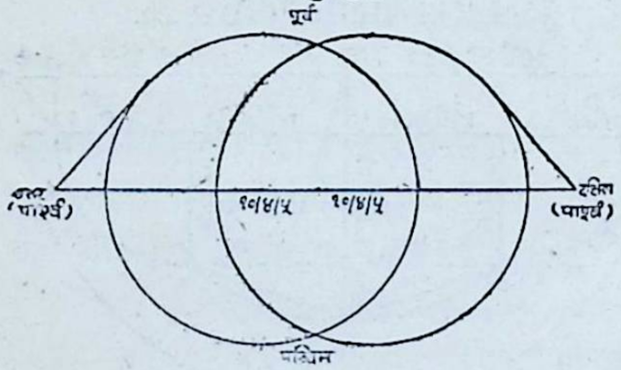

मध्यकेन्द्र से—दक्षिण दिशा की तरफ १०।४।५। अंगुल हटाकर एक चिन्ह करे। इस चिन्ह से एक वृत्त १४।५।२ का बनावे। तदनन्तर मध्य केन्द्र से दक्षिण दिशा की तरफ १०।४।५ अंगुल हटाकर १४।५।२ का वृत्त बनावे। तदन्तर वृत्त के बराबर बराबर के आठ भाग करे। (१) पूर्व दिशा—मुख होगी (२) अग्निकोण अंश (स्कन्घ) होगा (३) दक्षिणदिशा पार्श्व (४) निर्ऋति कोण श्रोणी (५) पश्चिम दिशा पुच्छ (६) वायव्यकोण—श्रोणी कटी (७) उत्तर दिशा—पार्श्व (८) ईशान कोण—अंश (स्कन्घ) होगा। इसी प्रकार बायें वृत्त में भी कल्पना करे। तदनन्तर वृत्त के भीतर ठीक मध्य से एक रेखा दक्षिणोत्तर लंबी सीधी दे। फिर वृत्त के बाईं तरफ (दक्षिणोत्तर लंबी रेखा के अन्तिम सिरे से) दक्षिण दिशा से एक रेखा लंबी—४।७।१। बढ़ा दे। वैसे ही उत्तर दिशा से एक लंबी रेखा ४।७।१। बढ़ा दे। तदनन्तर—दक्षिण दिशा में पार्श्व और स्कन्घ के मध्य में चिन्ह कर—४।७।१ वाली रेखा के अन्तिम सिरे से एक रेखा टेढ़ी ले जाकर पार्श्व और स्कन्घ के मध्य चिन्ह में मिला दे। वैसे ही उत्तर दिशा में—पार्श्व और स्कन्घ के मध्य में चिन्ह कर ४।७।१ वाली—रेखा के अन्तिम सिरे से एक रेखा टेढ़ी ले जाकर पार्श्व और स्कन्घ के मध्य चिन्ह में मिला दे। ऐसा करने में घनुषाकार कुण्ड—बन जायगा। इसमें यह बात ध्यान रखना चाहिये कि—कारीगर से कहकर पार्श्व और स्कन्घ के

नोट—व्यास २९।२।४ होगा उसका आधा १४।५।२ होगा व्यास का तृतीयांश ९।६।१ है इसका द्वादशांश ०।६।४। तृतीयांश और द्वादशांश का जोड़ १०।४।५ होगा।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

मध्य में जो टेढी रेखा दे वहाँ से ऊपर की तरफ (ऊपर के भाग में) अर्थात् पूर्व दिशा की तरफ धनुष के रूप का आकार कुछ उठा कर बनावे । यह व्यवस्था दक्षिण तरफ की हुई। वैसे ही उत्तर भाग की भी व्यवस्था कारीगर से करा ले। तदनन्तर पश्चिम का वृत्त का भाग मिटा दे। यह प्रथा उत्तम नहीं मालूम होता।

(शनि कुण्ड)

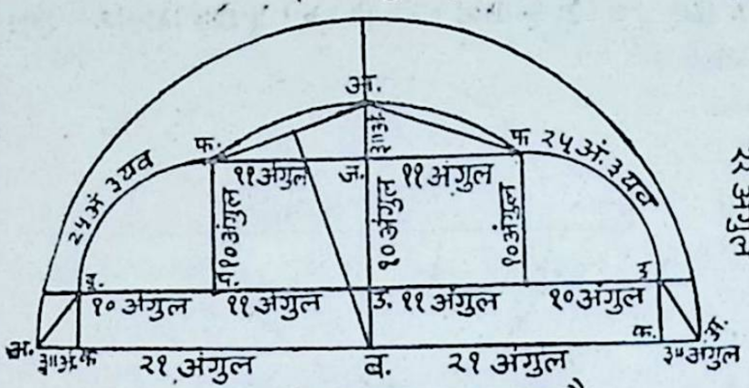

यह लघुपीठ माला का प्रकार है।

(आगन्तुक चतुरस्र प्रदर्शनाय क्षेत्रम्)

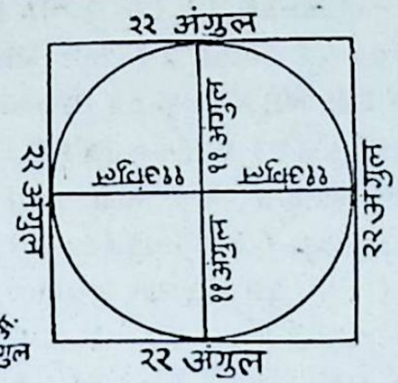

अ ब = २४॥ अंगुल, अ क = ३॥ अंगुल, क ब = २१ अंगुल, □ फ इ उ ब = संग्राहार्घ-फलम् = ७३ अंगुल ४ यव, इ प क = वृत्तपाद-फलम् = ७८।४, प च ज त्रिभुजफलम् – अ क इ त्रिभुज फल = कोणांशफलम् $\frac{४७}{४}$ $\frac{४१}{८}$ = $\frac{१५४}{८}$ + ४६ = $\frac{२०३}{८}$ = अंगुल २५ । यव ३ । ज्यास्पृक् सूत्रान्तश्चतुरस्रम् = प फ ज उ ▭ तत्फलम् अर्थात्—चतुरस्रफलम् = ११०। यह आधे का फल है अर्थात् मध्य से साढ़े चौबीस अंगुल का एक आधा चाप बनावे । इसका फल—२८७।३ होगा। उसी मध्य से दूसरी तरफ साढ़े चौबीस का आधा चाप बनावे। उसका फल भी २८७।३ होगा। दोनों चाप का फल ५७६ होगा। मध्य से जो एक रेखा पूर्व पश्चिम होगी वह १७ अंगुल की होगी।

अर्थात्—प और उ व्यासार्धवृत्तम् । एतत् वृत्तबहिर्गतं यद् चतुरस्रं तदेवागन्तुकं समचतुरस्रम् । तत्रैको भुजः २२ अगु० ।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

४८४ = २२ × २२ = आगन्तुक चतुरस्रफलम् । ३८० = वृत्तफलम् । यस्य व्यासः = २२ । १०४ । (१)

(राहुका कुण्ड प्रथम प्रकार)

३८ अंगुल ३ यव और २ यूका के आधे को (१९ । १ । ५) प्रकाल से नापकर मध्य बिन्दु से एक गोलाकार वृत्त बनावे। तदनन्तर (१) मुख से एक सीधी रेखा दे जो वाम श्रोणी में मिले। (२) दशांश से एक सीधी रेखा दे जो पुच्छ में मिले। (३) वामांश से एक सीधी रेखा दे जो दक्षपार्श्व में मिले। (४) वामपार्श्व से एक सीधी रेखा दे जो दक्षश्रोणी में मिले। ऐसा करने से मध्य में एक चतुरस्र बन जाता है। फिर वामपार्श्व से एक टेढ़ी रेखा दे जो वामांश से मिले। अर्थात् वामांशवाली रेखा और मुखवाली रेखा के सन्धि में जाकर मिले। वैसे ही दक्षश्रोणी से एक टेढ़ी रेखा दे जो दक्षपार्श्व में मिले। अर्थात्—पुच्छवाली रेखा और दक्षपार्श्व वाली सन्धि में जाकर मिले। फिर—जो रेखा वामांश से दक्षपार्श्व कोण में गई है उस रेखा में अर्थात्—वामांश और मुख की सन्धि से और दक्षपार्श्व पुच्छ वाली रेखा की सन्धि के—बीच के हिस्से का मध्य साधन कर दो वृत्तार्ध बनावे। अर्थात्—आधे आधे वृत्त बनाने से शूर्प कुण्ड बन जाता है।

---

(१) संग्राहोर्घे सार्धरामेण चापेन्तर्जार्हैः स्यादृवृत्तपादोदिकङ्कात् । सूत्राद्रौद्राद्बाह्यमौर्व्यर्हमेवं वृत्तं दद्याज्ज्यास्पृगेवं परार्धम् ॥

चापे यदर्घे तत्र सार्धत्र्यङ्गुलेन संग्राहः भागः कर्तव्यः। ततः दशाङ्गुलात्सूत्रादन्तर्ज्यार्हैः वृत्तपादः कर्तव्यः। तथा तत्र एकादशाङ्गुलेन सूत्रेण चापज्यास्पृक् बाह्यज्यार्हं वृत्तं दद्यात्। तथा च व्यासं ग्राहचिन्हयोरन्तरं २१। एकविंशत्यङ्गुलं भवति। एवमेव द्वितीयार्घं भवति। अन्तर्बहिर्ज्यार्हत्वं तदसस्वार्थम्! अत्र फलं संग्राहार्धफलम्—७३।४। वृत्तपादफलम्—७८।४। ज्यास्पृक् सूत्रान्तश्चतुरस्रफलम् तत्र एका कोटिः ११ परा कोटिः १० कोणांशफलम् २६ तत्रागन्तुके चतुरस्रे अंशत्रयं ७८ त्यक्त्वा शेषांशो ग्राह्यः २६। तथा च ७३।४। एवं ७८।४ एवं ११० एकत्र २२८ एवं परार्घस्य २८८ मिलितम्—५७६।

नोट—जोड़ में २८८।७३।४, ७८।४, ११', २५।३, २८७।३ आता है। पांच यव का फरक पड़ता है।

नोट—मुद्रित संस्काररत्नमाला, संस्कार गणपति, कुण्डरत्नावली, लिखित-ग्रहपीठमाला आदि भी देखिये।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

दूसरा प्रकार—२६ अंगुल ६ यूका का आधा नापकर मध्य विन्दु से एक गोलाकार वृत्त बनावे। तदनन्तर पूर्ववत् सत्र क्रिया करे। केवल वामांशवाली रेखा में जो दो वृत्तार्ध (शूर्प के आकार की तरह बने हैं) वे इस दूसरे प्रकार में न बनकर केवल उतनी जमीन का मध्य साधन कर मध्य में प्रकाल रख ईशानवाली सन्धि से घुमाकर दूसरी सन्धि में मिला देने से शूर्प कुण्ड बन जायगा।

(शूर्पकुण्ड)

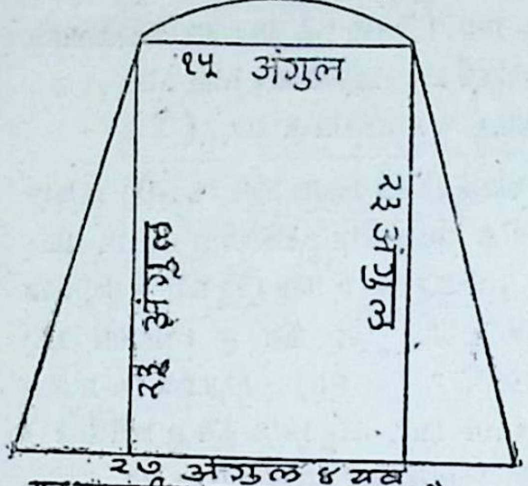

यह लघुपीठ माला का प्रकार है।

राहु कुण्ड—तात्पर्य यह है–दक्षश्रोणी से रेखा का नाप २७ अंगुल ४ यव है। दक्षपार्श्व से वामांश की रेखा का नाप १५ अंगुल है। और चतुरस्र के भीतर वाली रेखा पुच्छ और मुख की रेखा का नाप अलग अलग २३ अंगुल है। दक्षश्रोणी और वामपार्श्व वाली रेखा जो चतुरस्र के बाहर पड़ेगी वह अलग २६ अंगुल २ यव है, अर्थात् दोनों छोर दक्षश्रोणी और वामपार्श्व १२ अंगुल ४ यव है। वामांश वाली रेखा का अर्थात् चतुरस्र का मध्य (१५ अंगुल का आधा ७॥ अंगुल का) साधन कर प्रकाल से घुमा दे तो धनुपाकार कुण्ड बन जायगा। यह लघुपीठ-माला का प्रकार है। अथवा—२८ अंगुल दक्ष-श्रोणी वाली रेखा, दक्षपार्श्व की रेखा २० अंगुल की। मुख और पुच्छ की रेखा जो चतुरस्र के भीतर है वह अलग अलग २४, २४ अंगुल की है। इसमें इतने ही बनने से शूर्प बन जाता है। यह लघुपीठमाला का दूसरा प्रकार है।

(शूर्पकुण्ड)

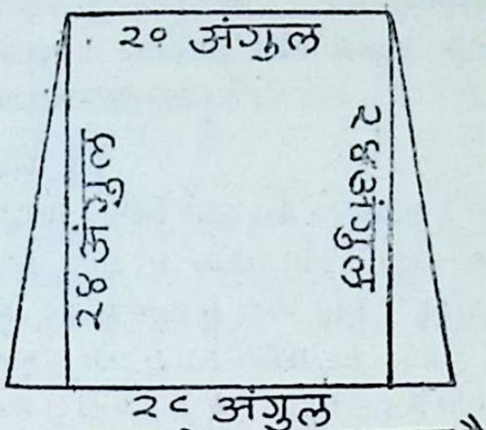

यह लघुपीठ माला का प्रकार है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

(केतु कुण्ड का प्रथम प्रकार)

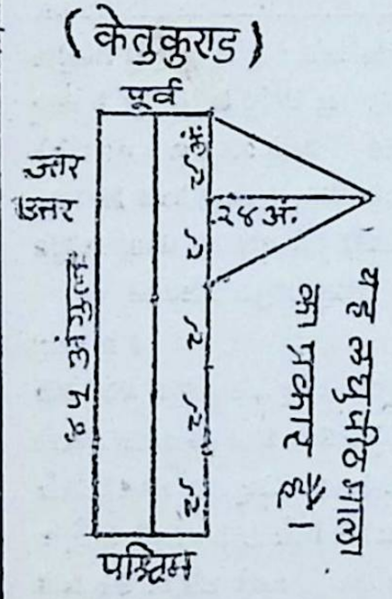

(१) (क) मध्य विन्दु से ४ अंगुल हटाकर एक सीधी रेखा पूर्व से पश्चिम अर्थात्—दक्षिण दिशा में दे जिसका नाप ४५ अंगुल होगा। (२) मध्य बिन्दु से ४ अंगुल हटाकर एक सीधी रेखा पश्चिम से पूर्व अर्थात्–उत्तर दिशा में दे जिसका नाप ४५ अंगुल होगा। [अर्थात्–मध्य विन्दु से ४ अंगुल हटकर साढ़े बाइस अंगुल की रेखा पूर्व दशा में और साढ़े बाइस अंगुल पश्चिम दिशा में (दक्षिण दिशा में) दे। वैसे ही साढ़े बाइस अंगुल की सीधी रेखा पश्चिम दिशा में और २२॥ अंगुल पूर्व दिशा में (उत्तर दिशा में) दे] (३) तदनन्तर दक्षिण दिशा वाली रेखा में— पूर्व दिशा से ९ अंगुल पर एक चिन्ह करे। (४) उस चिन्ह से फिर ९ अंगुल पर दूसरा चिन्ह करे ऐसा करने से दो चिन्ह नव नव अंगुल के अलग २ हुए। वैसे कुल जगह १८ अंगुल हुई। (४) तदनन्तर जो पूर्व दिशा से ६ अंगुल पर चिन्ह किया है उस चिन्ह से २४ अंगुल की एक सीधी रेखा दक्षिण दिशा की तरफ ले जाय। (५) दक्षिण दिशा वाली रेखा के पूर्व दिशा से एकटेढ़ी रेखा दे जो दक्षिण दिशा में २४ अंगुल वाली रेखा के अन्तिम सिरे में मिले। वैसे ही दूसरे ९ अंगुलात्मक चिन्ह से एक टेढ़ी रेखा दे जो २४ अंगुल वाली रेखा के अन्तिम सिरे में मिले। ऐसा करने से केतु कुण्ड ध्वजाकर बन जाता है।

नोट—४५ अंगुल की जो रेखा दक्षिण दिशा में दी गई है। जिसे 'दण्ड वृहज्या' शब्द से कह सकते हैं। उस रेखा के पाँच भाग करे। फी भाग ६ अंगुल का होगा।

(क) मध्य विन्दु को स्पर्श करती हुई एक रेखा मुख से प्रांरभकर (पूर्व दिशा से) पुच्छ (पश्चिम दिशा तक) में मिला दे।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

(दूसरा प्रकार)

जैसे मण्डप १६ हाथ है तो फी भाग ५ हाथ ८ अंगुल होगा। तो वायव्यकोण का भाग भी ५ हाथ ८ अंगुल का होगा उसका मध्य दो हाथ १६ अंगुल होगा। उस मध्य से (२१। ०। ०। ६) इक्कीस अंगुल ६ लिक्षा उत्तर की तरफ हटकर एक चिन्ह करे उस चिन्ह से २९ अंगुल शून्य यव ६ यूका का एक गोलाकार वृत्त बनाकर उस मध्य से (यह मध्य की दण्ड वृहज्या ५८। १। ४ होगी) दो अंगुल और ५ यूका हटाकर एक रेखा दे जो पूर्व से पश्चिम दिशा की तरफ हो अर्थात् दक्षिण दिशा की तरफ हो। वैसे ही उसी मध्य से २ अंगुल और ५ यूका हटाकर उत्तर की तरफ एक पूर्व से पश्चिम एक रेखा दे। जिन दोनों रेखाओं का नाप अलग अलग ५८। ०। ३ होगा। तदनन्तर पूर्व दिशा से एक रेखा दक्षिणोत्तर देकर दोनों रखाओं के अग्रभाग को मिला दे। वैसे ही पश्चिम दिशा से दक्षिणोत्तर दोनों रेखाओं के अग्रभाग से रेखा द्वारा मिला दे।

तदनन्तर दक्षिण दिशा वाली रेखा का ४ भाग बराबर बराबर करे। फी भाग १४ अंगुल, ४ यव, शून्य यूका और छः बालाग्र होगा। अर्थात् दक्षिण दिशा का अग्र पूर्व दिशा से एक चिन्ह १४। ४। ०। ६ पर करे। तदनन्तर दूसरा चिन्ह वहाँ से १४। ४। ०। ६ पर मध्य से करे। यही रेखा का मध्य होगा। तदनन्तर पूर्व दिशा जो १४। ४। ० । ६ पर चिह्न किया है वहाँ से एक सीधी रेखा दक्षिण दिशा की तरफ दे जिसका नाप २३। ०। ७। ४ होगा। अर्थात् वहाँ से जो रेखा चलेगी वह अग्निकोण (दक्षांश) परिधि के २४ अंश में लगेगी। फिर पूर्व दिशा से एक टेढ़ी रेखा दे जो दक्षिण दिशा में दी हुई रेखा के अन्तिम सिरे में मिले। और मध्य में पश्चिम दिशा से एक टेढ़ी रेखा दे जो दक्षिण वाली रेखा के अन्तिम सिरे में मिले। एसा करने से ध्वजाकार कुण्ड बनेगा।

नोट— व्यास ५८। १। ४। गुणलव १६। ३। १। ३। इनांश १। ४। ७। ३। गुणलव और द्वादंश का जोड़ २१। ०। ०। ६। होगा।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

(तीसरा प्रकार केतु कुण्ड का कुण्डरत्नावली से)

५८ अंगुत, १ यव और ४ यूका के आधे को १४।४।३। प्रकाल से नाप कर मध्यविन्दु से दो अंगुल और ५ यूका हटा कर एक रेखा दक्षिण दिशा की तरफ (पूर्व से पश्चिम दिशा की तरफ) दे। तद्वत् मध्य विन्दु से दो अंगुल और ५ यूका हटाकर उत्तर दिशा की तरफ (पूर्व से पश्चिम दिशाकी तरफ) दे। इस रेखा का नाप अलग अलग ५८ अंगुल, ३ यूका होगा जिसे ध्वजदण्ड वृहज्ज्या शब्द से कहा जाता है। तदनन्तर पूर्व दिशा से दोनों रेखाओं को मिला दे रेखा द्वारा दक्षिणोत्तर। वैसी ही पश्चिम तरफ मिला दे दक्षिणोत्तर। ध्वजदण्ड वृहज्ज्या से दक्षिण दिशावाली रेखा जो है जिसका नाप ५८।३। है उसका चार भाग करे प्रत्येक भाग अर्थात्—फी भाग १४ अंगुल, ४ यव, शून्य यूका और छः बालाग्र होगा। अर्थात्— पूर्व दिशा से—१४।४।०।६ पर चिन्ह करे। वह प्रथम चिन्ह हुई। इस चिन्ह से १४।४।०।६। पर दूसरी चिन्ह करे। तदनन्तर प्रथम चिन्ह से—एक रेखा दक्षिण दिशा की तरफ दे जिस रेखा का नाप लंबाई २३।०।७।४ होगा। फिर—पूर्व दिशा के कोने से एक टेढ़ी रेखा दे जो दक्षिण दिशा में बढ़ी हुई रेखा में (२३।१।७।४) में मिले। वैसे ही दक्षिण दिशा से एक रेखा टेढ़ी दे जो रेखा २३।०। ७।४ वाली में लिले। ऐसा करने से केतु कुण्ड बन जाता है।

(केतु कुण्ड)

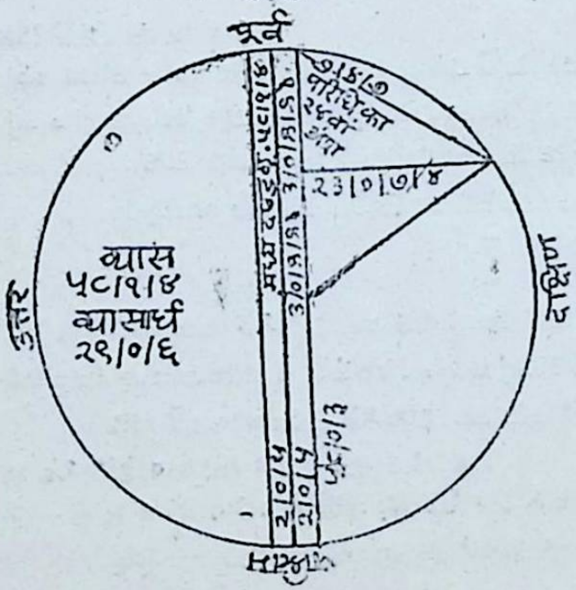

नोट—(१) मध्य बिन्दु की रेखा का नाप ५८ अंगुल ३ यूका होगा जिसे दण्ड वृहज्ज्या शब्द से कहते हैं। और २५।१।४।४ वाली रेखा का नाप मध्य विन्दु से होगा। दक्षिण दिशा वाली रेखा से तो २३।०।०।४ होगा। पूरी रेखा का नाप दक्षिण से उत्तर जायगी अर्थात्—पूर्वदिशा से जो मध्य १४।४।०।६ पर करेंगे वही रेखा पूरी ५०।३।१। की होगी।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

विशेष—कुण्डरत्नावली में जो श्लोक है—मध्यात् घायोर्दिशायां ततिगुण ३ लवके स्वेन भागेन हीने कृते। ऐसा पढ़ा जाय तो उत्तम मालुम होता है। व्यास ५८।१।४ तृतीयांश १९।३।१।४ स्वद्वादशांश, हुआ। व्यास ५८।१।४ का १२ वाँ भाग ४।६।६।३ हुआ इसको तृतीयांश से घटाने से १४।४।३।०। होगा। यही पक्ष उत्तम है।

अर्थात् मध्य केन्द्र से १४।४।३। का एक वृत्त बनाकर उस वृत्त में पूर्व-और पश्चिम एक रेखा लंबी दे जिसकी लंबाई ५८।१।१४। होगी। इस रेखा के मध्य भाग से एक रखा दक्षिण दिशा की तरफ (२ अंगुल और २ यूका हटाकर होगी। इस रेखा का जो मध्य होगा उस मध्य में पूर्व दिशा की तरफ १४।४।३। पर एक चिन्ह होगा। इसकी लंबाई दक्षिण की तरफ—२३।०।७।४ होगी।

[कुण्डकल्पद्रुमोक्त पद्मकुण्ड निर्माण]

चौवीस अंगुल का चतुरस्र बनाकर उस चतुरस्र के ठीक मध्य से ग्यारह अंगुल और सात लिक्षा का एक गोलाकार वृत्त बनावे। तदनन्तर उस वृत्त के आठ भाग करे। (फी भाग—आठ अंगुल, चार यव, एक लिक्षा, और तीन बालाग्र का होगा। प्रकाल द्वरा नापने पर। तात्पर्य यह है कि चार अंगुल, तीन यव, साढ़े पांच लिक्षा को प्रकाल द्वारा उत्तर दिशा से एक एक भाग को करेंगे तो उपरोक्त ८।४।०।१।३। फी भाग होगा फिर प्रकाल से फी भाग को बनाने से पद्म कुण्ड बन जायेगा। इसी को काशी के वैदिक 'कटोरिया दार पद्म कुण्ड' कहते हैं। यह पद्म कुण्ड बनने पर बड़ा सुन्दर लगता है।

(ग्रह कुण्डों में योनि स्थान निर्देश)

कुण्डरत्नावल्याम्—पञ्चास्रं च त्र्यस्रकं बाणकुण्डं दीर्घोम्नायास्तीति सौम्याग्रिकाणि। चापं शूर्पं पश्चिमज्यं च केतुर्दक्षाग्रः स्यात्सौमिकं चोत्तरास्यम्॥ निर्णयसिन्धुटीकायाम्—यष्टिर्त्राणैः सौम्यदिश्यग्र एव त्र्यस्रं तादृक्शूर्पकं पश्चिमास्यम्। बार्हस्पत्यं सौम्यदीर्घं धनुस्तत्पश्चाद् दिग्ज्यं शुक्रियं सौम्यकोणम्॥

* समाप्त *

मुद्रक—केशव कृष्ण पावगी, हितचिन्तक प्रेस, रामघाट, बनारस-१.

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

अथ श्रीशुक्लयजुर्वेदसंहिता उत्तरविंशतिः

(मन्त्रद्वारा कार्यसिद्धि कथन)

महामहोपाध्याय पण्डित श्रीविद्याधरशास्त्रि पुत्र श्रीदौलतरामगौड द्वारा संशोधित

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

वेद् मन्त्रों द्वारा कार्यसिद्धि कथन

अग्निपुराणे—पुष्कर उवाच–यजुर्विधानं वक्ष्यामि भुक्तिमुक्तिप्रदं शृणु। ओङ्कारपूर्विका राम महाव्याहृतयो मताः ॥ १ ॥ सर्वकल्मषनाशिन्यः
सर्वकामप्रदास्तथा। आज्याहुतिसहस्रेण देवानाराधयेद् बुधः २ मनसः काङ्क्षितं राम मनसेप्सितकामदम्। शान्तिकामो यवैः कुर्यात्तिलैः पापापनुत्तये ३
धान्यैः सिद्धार्थकैश्चैव सर्वकामकरैस्तथा। औदुम्बरीभिरिध्माभिः पशुकामस्य शस्यते ४ दध्ना चैवान्नकामस्य पयसा शान्तिमिच्छतः। अपामार्गसमिद्भिस्तु
कामयन्कनकं बहु ५ कन्याकामो घृताक्तानि युग्मशो ग्रथितानि तु। जातिपुष्पाणि जुहुयात् ग्रामार्थी तिलतण्डुलान् ६ वश्यकर्मणि शाखोटवासापामार्गमेव
च। विषासृङ्मिश्रसमिधां व्याधिघातस्य भार्गव ७ क्रुद्धस्तु जुहुयात्सम्यक् शत्रूणां वधकाम्यया। सर्वव्रीहिमयीं कृत्वा राज्ञः प्रतिकृतिं द्विजः ८ सहस्रशस्तु
जुहुयाद्राजा वशगतो भवेत्। वस्त्रकामस्य पुष्पाणि दूर्वा व्याधिविनाशिनी ९ ब्रह्मवर्चसकामस्य वासोऽग्रं च विधीयते। प्रत्यङ्गिरेषु जुहुयात्तुषकण्टक-
भस्मभिः १० विद्वेषणे च पक्ष्माणि काककौशिकयोस्तथा। कपिलं च घृतं हुत्वा तथा चन्द्रग्रहे द्विज ११ वचाचूर्णेन संपातात्समानीय च तां वचाम्।
सहस्रमन्त्रितां भुक्त्वा मेधावी जायते नरः १२ एकादशाङ्गुलं शङ्कुं लौहं खादिरमेव च। द्विषतो वधोऽसीति जपन्निखनेद्रिपुवेश्मनि १३ उच्चाटनमिदं
कर्म शत्रूणां कथितं तव। चक्षुष्पा इति जप्त्वा च विनष्टं चक्षुराप्नुयात् १४ उपयुञ्जत इत्येतदनुवाकं तथाऽन्नदम्। तनूनपाग्ने सदिति दूर्वां हुत्वाऽर्ति-
वर्जितः १५ भेषजमसीति दध्याज्यैर्होमः पशूपसर्गनुत्। त्रियम्बकं यजामहे होमः सौभाग्यवर्धनः १६ कन्यानाम गृहीत्वा तु कन्यालाभकरः परः। भयेषु तु
जपन्नित्यं भयेभ्यो विप्रमुच्यते १७ धुस्तूरपुष्पं सघृतं हुत्वा स्यात्सर्वकामभाक्। हुत्वा तु गुग्गुलं राम स्वप्ने पश्यति शङ्करम् १८ युञ्जते मनोनुवाकं
जप्त्वा दीर्घायुराप्नुयात्। विष्णो रराटमित्येतत्सर्वबाधाविनाशनम् १९ रक्षोघ्नं च यशस्यं च तथैव विजयप्रदम्। अयं नो अग्निरित्येतत्सङ्ग्रामे विजय-
प्रदम् २० इदमापः प्रवहत स्नाने पापापनोदनम्। विश्वकर्मन्नु हविषा सूचीं लौहीं दशाङ्गुलम् २१ कन्याया निखनेद्द्वारि साऽन्यस्मै न प्रदीयते। देव
सवितरे तेन हुतेनैतेन चान्नवान् २२ अग्नौ स्वाहेति जुहुयाद्बलकामो द्विजोत्तमः। तिलैर्यवैश्च धर्मज्ञ तथाऽपामार्गतण्डुलैः २३ सहस्रमन्त्रितां कृत्वा तथा
गोरोचनां द्विज। तिलकं च तथा कृत्वा जनस्य प्रियतामियात् २४ रुद्राणां च तथा जप्यं सर्वाघविनिषूदनम्। सर्वकर्मकरो होमस्तथा सर्वत्र शान्तिदः
२५ अजाविकानामश्वानां कुञ्जराणां तथा गवाम्। मनुष्याणां नरेन्द्राणां बालानां योषितामपि २६ ग्रामाणां नगराणां च देशानामपि भार्गव। उपद्रुतानां
धर्मज्ञ व्याधितानां तथैव च २७ मरके समनुप्राप्ते रिपुजे च तथा भये। रुद्रहोमः परा शान्तिः पायसेन घृतेन च २८ कूष्माण्डघृतहोमेन सर्वान्पापा-

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

न्व्यपोहति । सक्तुयावकभैक्षाशी नक्तं मनुजसत्तम २९ बहिः स्नानरतो मासान्मुच्यते ब्रह्महत्यया । मधु वातेति मन्त्रेण होमादितोऽखिलं लभेत् ३० दधिक्राव्णेति हुत्वा तु पुत्रान्प्राप्नोत्यसंशयम् । तथा घृतवतीत्येतदायुष्यं स्याद् घृतेन तु ३१ स्वस्तिन इन्द्र इत्येतत्सर्वबाधाविनाशनम् । इह गावः प्रजायध्वमिति पुष्टिविवर्धनम् ३२ घृताहुतिसहस्रेण तथाऽलक्ष्मीविनाशनम् । स्रुवेण देवस्य त्वेति हुत्वापामार्गतण्डुलम् ३३ मुच्यते विकृताच्छीघ्रमभिचारान्न संशयः । रुद्र यत्ते पलाशस्य समिद्भिः कनकं लभेत् ३४ शिवो भवेत्यग्न्युत्पाते व्रीहिभिर्जुहुयान्नरः । याः सेना इति चैतच्च तस्करेभ्यो भयापहम् ३५ यो अस्मभ्यमरातीयाद् हुत्वा कृष्णतिलान्नरः । सहस्रशोऽभिचाराच्च मुच्यते विकृताद्विज ३६ अन्नेनान्नपतेत्येवं हुत्वाचान्नमवाप्नुयात् । हंसः शुचिषदित्येतज्जप्तं तोयेऽघनाशनम् ३७ चत्वारि शृङ्ग इत्येतत्सर्वपापहरं जले । देवा यज्ञेति जप्त्वा तु ब्रह्मलोके महीयते ३८ वसन्तेति च हुत्वाऽऽज्यमादित्याद्वरमाप्नुयात् । सुपर्णोऽसीति चेत्यस्य कर्म व्याहृतितिवद् भवेत् ३९ नमः स्वाहेति त्रिर्जप्त्वा बन्धनान्मोक्षमाप्नुयात् । अन्तर्जले त्रिरावर्त्य द्रुपदां सर्वपापभुक् ४० इह गावः प्रजायध्वं मन्त्रोऽयं बुद्धिवर्धनः । हुतं तु सर्पिषा दध्ना पयसा पायसेन वा ४१ शन्नो देवीति चैतेन हुत्वा पर्णफलानि च । आरोग्यं श्रियमाप्नोति जीवितं च चिरं तथा ४२ औषधीः प्रतिमोदध्वं वपन्ने लवनेऽर्थकृत् । अश्वावती पायसेन होमाच्छान्तिमवाप्नुयात् ४३ तस्मा इति च मन्त्रेण बन्धनस्थो विमुच्यते । युवा सुवासा इत्येव वासांस्याप्नोति चोत्तमम् ४४ मुञ्चन्तु मा शपथ्यादिसर्वकिल्बिषनाशनम् । मा मा हिं सीस्तिलाज्येन हुतं रिपुविनाशनम् ४५ नमोऽस्तु सर्पेभ्यो हुत्वा घृतेन पायसेन तु । कृणुष्व पाज इत्येतदभिचारविनाशनम् ४६ दूर्वाकाण्डायुतं हुत्वा काण्डात्काण्डेति मानवः । ग्रामे जनपदे वाऽपि मरकं तु शमं नयेत् ४७ रोगार्तो मुच्यते रोगात्तथा दुःखात्तु दुःखितः । औदुम्बरीश्च समिधो मधुमान्नो वनस्पतिः ४८ हुत्वा सहस्रशो राम धनमाप्नोति मानवः । सौभाग्यं महदाप्नोति व्यवहारे तथा जयम् ४९ अपां गर्भमिति हुत्वा देवं वर्षापयेद् ध्रुवम् । अपः पिबेति च तथा हुत्वा दधि घृतं मधु ५० प्रवर्तयति धर्मज्ञ महावृष्टिमनन्तरम् । नमस्ते रुद्र इत्येतत्सर्वोपद्रवनाशनम् ५१ सर्वशान्तिकरं प्रोक्तं महापातकनाशनम् । अध्यवोचदित्यनेन रक्षणं व्याधितस्य तु ५२ रक्षोघ्नं च यशस्यं च चिरायुः पुष्टिवर्धनम् । सिद्धार्थकानां क्षेपेण पथि चैतज्जपन्सुखी ५३ असौ यस्ताम्र इत्येतत्पठन्नित्यं दिवाकरम् । उपतिष्ठेत धर्मज्ञ सायं प्रातरतन्द्रितः ५४ अन्नक्षयमवाप्नोति दीर्घमायुश्च विन्दति । प्रमुञ्च धन्वन्नित्येतत्षड्भिरायुधमन्त्रणम् ५५ रिपूणां भयदं युद्धे नात्र कार्या विचारणा । मा नो महान्त इत्येवं बालानां शान्तिकारकम् ५६ नमो हिरण्यबाहव इत्यनुवाकसप्तकम् । राजिकां कटुतैलाक्तां जुहुयाच्छत्रुनाशनीम् ५७ नमो व किरिकेभ्यश्च पद्मलक्षकृतैर्नरः । राज्यलक्ष्मीमवाप्नोति तथा बिल्वैः सुवर्णकम् ५८ इमा रुद्रायेति तिलैर्होमाच्च धन-

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

माप्यते । दूर्वाहोमेन चाज्येन सर्वव्याधिविवर्जितः ५९ आशुः शिशान इत्येतदायुधानां च रक्षणे । सङ्ग्रामे कथितं राम सर्वशत्रुनिबर्हणम् ६० वाजश्च मेति जुहुयात्सहस्रं पञ्चभिर्द्विज । आज्याहुतीनां धर्मश चक्षूरोगाद्विमुच्यते ६१ शं नो वनस्पते गृहे होमः स्याद्वास्तुदोषनुत् । अग्न आयूंषि हुत्वाज्यं द्वेषं नाप्नोति केन चित् ६२ अपां फेनेति लाजाभिर्हुत्वा जयमवाप्नुयात् । भद्रा इतीन्द्रियैर्हीनो जयन्स्यात्सकलेन्द्रियः ६३ अग्निश्च पृथिवी चेति वशीकरणमुत्तमम् । अध्वनेति जपन्मन्त्रं व्यवहारे जयी भवेत् ६४ ब्रह्म राजन् यमिति च कर्मारंभे तु सिद्धिकृत् । संवत्सरोऽसीति घृतैर्लक्षहोमादरोगवान् ६५ केतुं कृण्वन्नितीत्येतत्सङ्ग्रामे जयवर्धनम् । इन्द्रोऽग्निर्धर्मइत्येतद्रणे धर्मनिबन्धनम् ६६ धनुर्नागेति मन्त्रश्च धनुर्ग्राहणिकः परः । यजीतेति तथा मन्त्रो विज्ञेयो ज्याभिमन्त्रणे ६७ मन्त्रश्चाहिरिवेत्येतत्च्छराणां मन्त्रणे भवेत् । वह्वीनां पितरित्येतत्तूणमन्त्रः प्रकीर्तितः ६८ युञ्जतीति तथाऽश्वानां योजने मन्त्र उच्यते । आशुः शिशान इत्येतद्यात्रारम्भणमुच्यते ६९ विष्णोः क्रमेति मन्त्रश्च रथारोहणिकः परः । आजङ्घतीति चाश्वानां ताडनीयमुदाहृतम् ७० याः सेना अभित्वरीति मरसैन्यमुखे जपेत् । दुन्दुभ्य इति वाप्येतद् दुन्दुभीताडनं भवेत् ७१ एतैः पूर्वहुतैर्मन्त्रैः कृत्यैव विजयी भवेत् । यमेन दत्तमित्यस्य कोटिहोमाद्विचक्षणः ७२ रथमुत्पादयेच्छीघ्रं सङ्ग्रामे विजयप्रदम् । आ कृष्णेति तथैतस्य कर्म व्याहृतिवद्भवेत् ७३ शिवसङ्कल्पजापेन समाधिं मनसो लभेत् । पञ्च नद्यः पञ्चलक्षं हुत्वा लक्ष्मीमवाप्नुयात् ७४ यदा बध्नन्दाक्षायणां मन्त्रेणानेन मन्त्रितम् । सहस्रकृत्वः कनकं धारयेद्रिपुवारणम् ७५ इमं जीवेभ्य इति च शिलां लोष्टं चतुर्दिशम् । क्षिपेद् गृहे तदा तस्य न स्याच्चौरभयं निशि ७६ परि मे गामनेनेति वशीकरणमुत्तमम् । इन्तुमभ्यागतस्तत्र वशी भवति मानवः ७७ भक्ष्यताम्बूलपुष्पाद्यं मन्त्रितं तु प्रयच्छति । यस्य धर्मश वशगः सोऽस्य शीघ्रं भविष्यति ७८ शं नो मित्र इतीत्येतत्सदा सर्वत्र शान्तिदम् । गणानां त्वा गणपतिं कृत्वा होमं चतुष्पथे ७९ वशीकुर्याज्जगत्सर्वं सर्वधान्यैरसंशयम् । हिरण्यवर्णाः शुचयो मन्त्रोऽयमभिषेचने ८० शं नो देवीरभिष्टये तथा शान्तिकरः परः । एकचक्रेति मन्त्रेण हुतेनाऽऽज्येन भागशः ८१ ग्रहेभ्यः शान्तिमाप्नोति प्रसादं न च संशयः । गावो भग इति द्वाभ्यां हुत्वाऽऽज्यं गा अवाप्नुयात् ८२ प्रवाद्वां षः सोपदिति ग्रहयज्ञे विधीयते । देवेभ्यो वनस्पत इति द्रुमयज्ञे विधीयते ८३ गायत्री वैष्णवी ज्ञेया तद्विष्णोः परमं पदम् । सर्वपापप्रशमनं सर्वकामकरं तथा ८४ ।

श्रीदौलतरामगौड

नोट—देखिये—अग्निपुराण, पुरश्चर्यार्णव, वृहत्पाराशरस्मृति और विद्यार्णवतन्त्र आदि में चतुर्वेदोक्त मन्त्रों का विशिष्ट विधान ।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

श्री:

मयाऽद्यमत्र एकादश
सिद्धिनीः निपयते चेतुराम:
पद्धती निबन्ध दत्त: ।
पद्मनाभशास्त्री

विद्याधरशर्मा
३/११/४०

शतमुख का नकशा

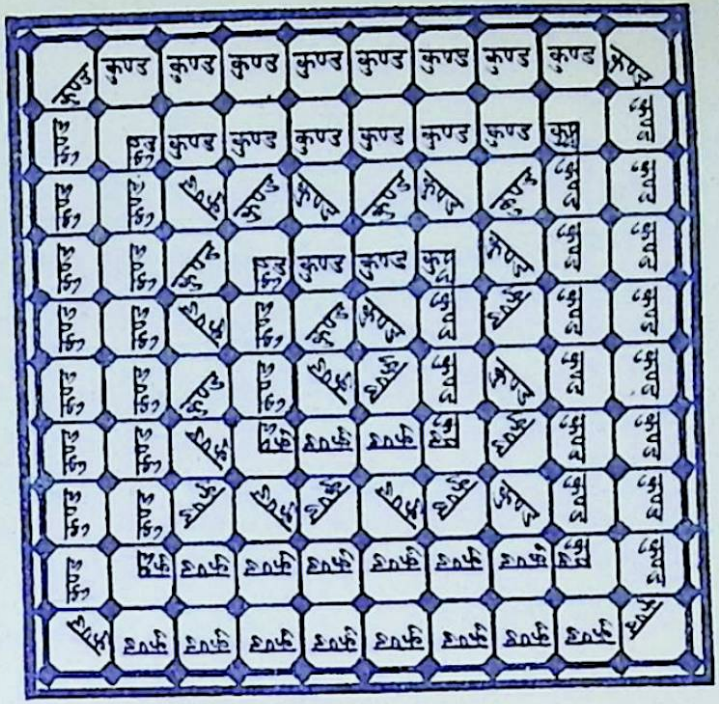

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

प्रतिमन्त्र के अन्तमें नाराय
णाय स्वाहा. यह सहस्रनाम भी करना होता है।
ब्राह्मणों को विशेषतः वैदिकों को जलपान प्रतिदिन देना समुचित होगा फलाहारी

आचार्य ब्राह्मण मण्डपमें आया जाया करेंगे।
वरन अतिरिक्त के इतर मण्डपमें प्रविष्ट न
होना चाहिये। पांव धोनें को के लिये मण्डपके
बाहर जल रहना चाहिए।

मण्डपके बाहर इतर लोगों के बैठने का पूर्ण
प्रबन्ध रहे। मण्डप के समीप [?] जिसके
निकट कूप, नल, कुटी, [illegible] आदि हो ताकि
कोई भी बाधा रक्षित रहे। —— इत्यादि

मण्डपमें राम कृष्णादि के चित्र भी दर्शनस्थानमें लटका दिये जावें
आधुनिक पुरुषों के नहीं।

विष्णुयाग एक लक्ष अथवा एक लाख साठ हजार आहुति
पुरुषसूक्त के सोलह मन्त्रों से होती हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

महामहोपाध्याय
श्री विद्याधर शास्त्री गौड

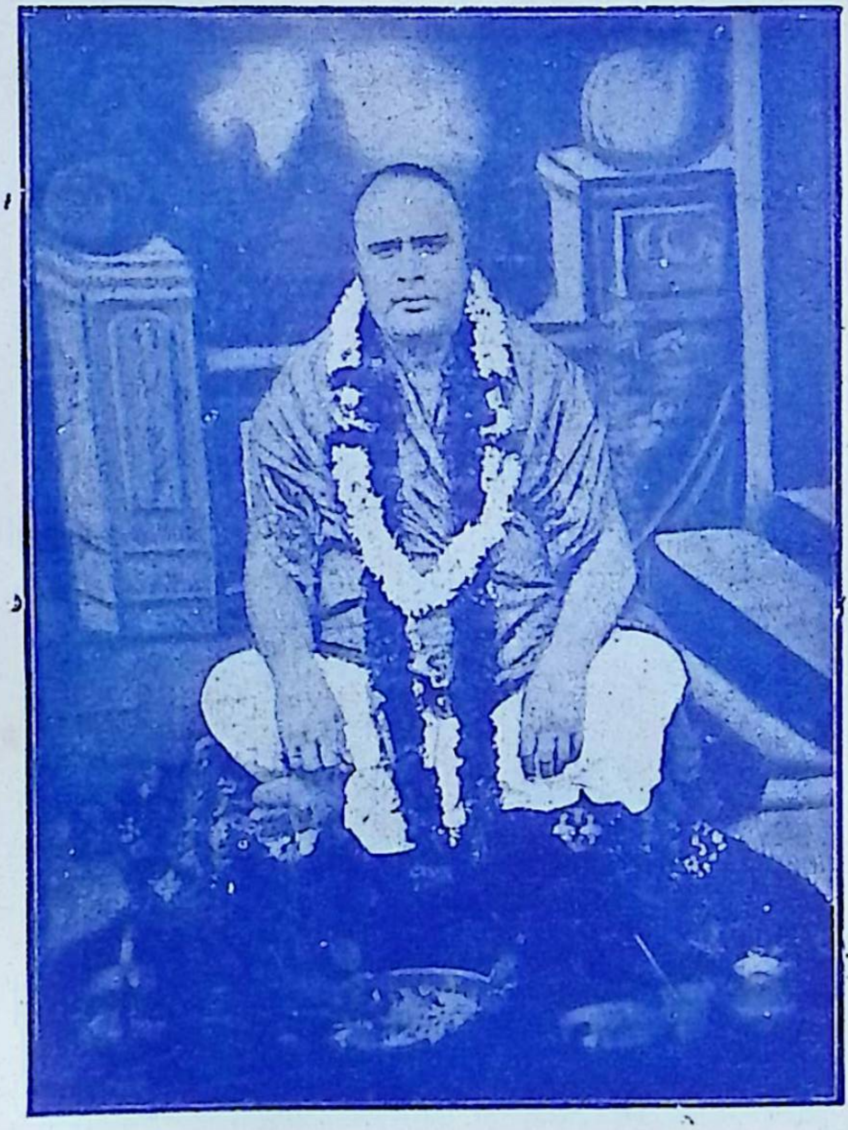

समर्पण—

जिनकी पुण्य स्मृति ही अवशिष्ट रह गयी है ऐसे पूज्यतम श्रीपितृ-देव के पावनतम कर कमलों में———————

—श्री दौलतराम गौड

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

प्रामाण्य—वेद, कर्मकाण्ड, पुराण, धर्मशास्त्र के यशस्वी टीकाकार—

श्री दौलतराम गौड

निर्णयसिन्धु, रामयज्ञ, विष्णुयाग, गणेशयाग, पुत्रेष्टियज्ञ, प्रजापतियाग, सूर्ययाग इन्द्रयाग, लक्ष्मीयाग, लक्ष्मीनारायणयागादि, भागवत, नवीन आह्निकसूत्रावली, विधानप्रकाश, देवपूजा और कुण्डनिर्माण विधान आदि छियासी ग्रन्थों के टीकाकार—

संयुक्त प्रांतीय सरकार

प्रमाणपत्र

स्वतन्त्रता-दिवस के अवसर पर, गवर्नमेन्ट हाउस लखनऊ में, हर एक्सेलेंसी श्रीमती सरोजिनी नायडू के संयुक्त प्रान्त के गवर्नरपद का भार ग्रहण करने का उत्सव हुआ था। उस समारोह में प्राच्य रीति के अनुसार गणेश-पूजन, कलश-स्थापन, वेद-पाठ एवं स्वस्तिवाचन इत्यादि किये गए थे। इस प्रमाणपत्र के द्वारा यह प्रमाणित किया जाता है कि काशी-निवासी कर्मकांडी विद्वान पं० "दौलत राम गौड़"...... ने उपर्युक्त पूजन-कृत्य में भाग लेकर उसे सफल बनाने में पूर्ण सहयोग दिया। पंडित जी ने विशुद्ध राष्ट्रीय भावना, सेवाभाव एवं कर्तव्य-बुद्धि से उपर्युक्त महत्त्व उत्सव में भाग लिया और उसकी शोभा तथा सार्थकता बढ़ाई। संयुक्त प्रांत की सरकार इनकी निस्पृह सेवा, तत्परता, कर्तव्य-बुद्धि एवं क्रिया-कुशलता के लिये इनकी आभारी है और उन्हें धन्यवाद देती है।

प्रधान सचिव,
संयुक्त प्रान्तीय सरकार।

लखनऊ :
स्वतंत्रता दिवस।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

सहस्र ब्राह्मण भोजन यन्त्र

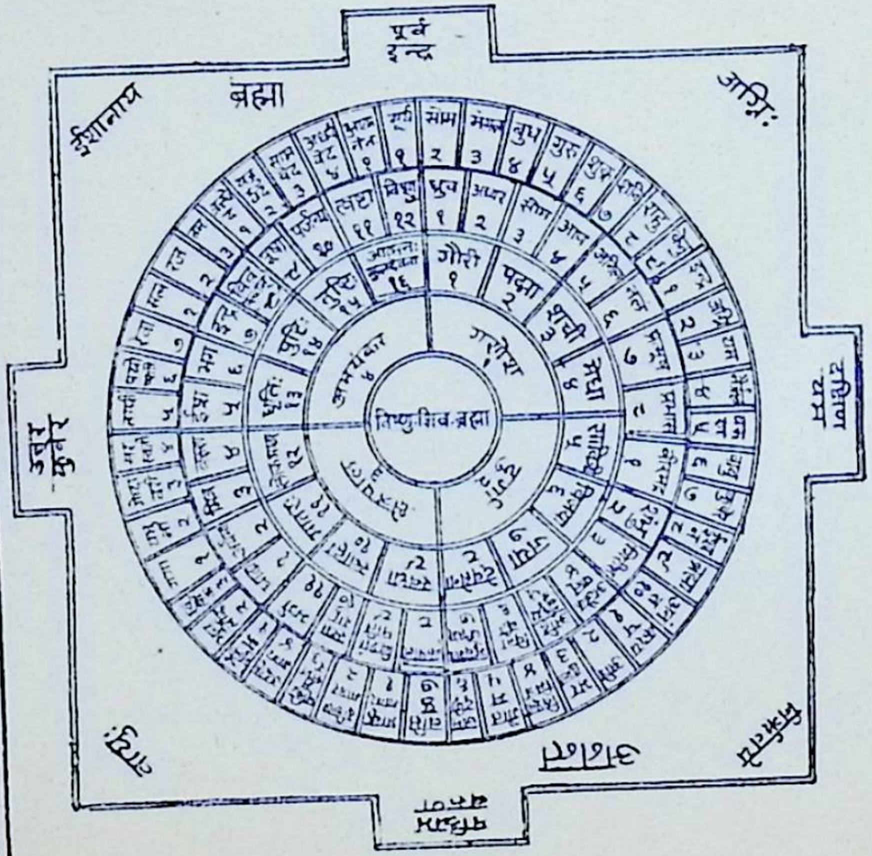

मण्डप का नकशा

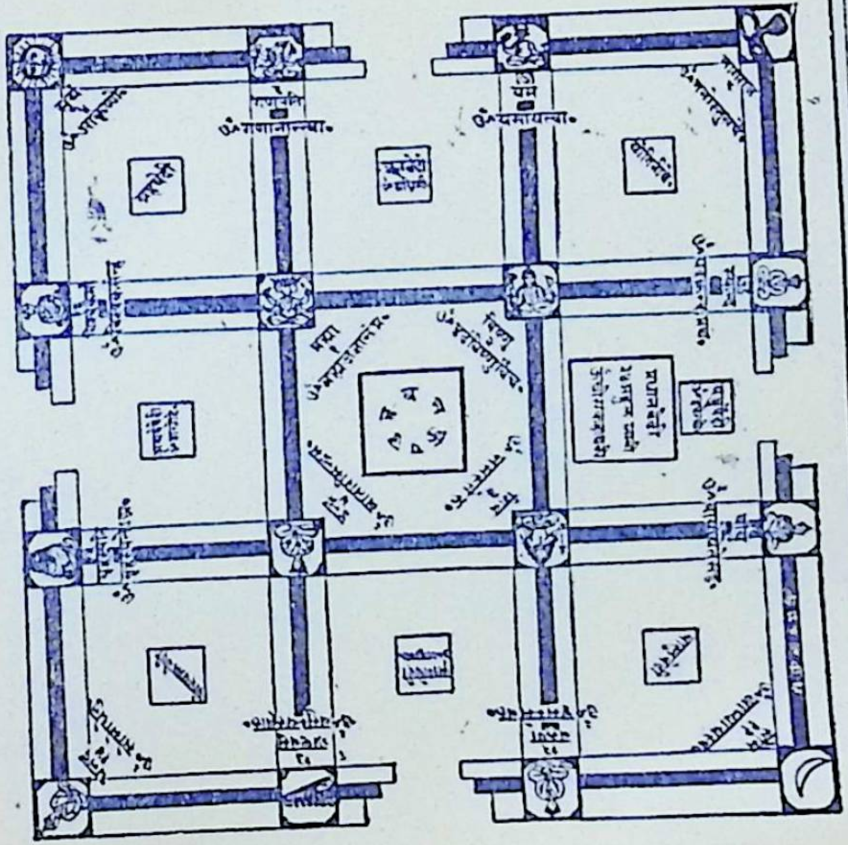

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

(धर्मशास्त्र)

धर्मशास्त्रं सितं शान्तं चारुवक्त्रं कुशासनम् ।
मुक्ताजपाक्षधृक्दक्षे तुलाहस्तन्तु वामतः ॥

(मीमांसा)

सोमकीर्तिसमाभासं मीमांसाशास्त्रमुत्तमम्
अक्षसूत्रं दधद्दक्षे सुधापूर्णं घटं परे ॥

(इतिहास)

इतिहासःकुशाभासः सूकरास्यो महोदरः ।
अक्षसूत्रं घटं बिभ्रत्पङ्कजाभरणान्वितः ॥

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

(साङ्ख्य)

साङ्ख्यं तत्कापिलंवभ्रुवक्त्रमुज्ज्वलकुण्डलम्।
जाप्यदण्डधरं दीर्घनखलोमजटाधरम् ॥

(पातञ्जलयोग)

पातञ्जलाभिधं रक्तं सर्पवक्त्रं सुतेजसम् ।
अक्षसूत्रं पताकाञ्च दधतं कुण्डलान्वितम् ॥

(धनुर्वेद)

पीतवर्णो धनुर्वेदः पिकवक्त्रो महत्तनुः ।
धनुर्बाणधरो रौद्रो मस्तके कपिला जटाः ॥

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

(आयुर्वेद)

आयुर्वेदो हरिद्राभो वानरास्यो विशालदृक् ।
अक्षसूत्रं सुधाकुम्भं बिभ्रदारोग्यदो भृशम् ॥

(न्यायशास्त्र)

अतसीपुष्पसङ्काशो न्यायो ज्ञेयो विपश्चिता ।
सिंहास्यो दक्षिणे सूत्रं ध्वजं वामकरे दधन् ॥

(नाट्यशास्त्र)

नृत्तशास्त्रमिदं रम्यं मृगवक्त्रं जटाधरम् ।
अक्षसूत्रं त्रिशूलञ्च बिभ्राणं च त्रिलोचनम् ॥

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

(शिक्षा)

शिक्षा शुभ्राऽभयकरा ज्ञानमुद्रासमन्विता।
अक्षसूत्रा सकुण्डा च द्विभुजा दण्डपङ्कजा ॥

(व्याकरण)

सित व्याकरणं ज्ञेय मयूराभसटोदरम् ।
वीणाकरान्वितं दिव्यं दिव्यवस्त्रविभूषितम्॥

(कल्प)

कल्पस्तु कुमुदाभः स्याद्वायसास्यो महोदरः।
कुठारदण्डाढ्यहस्तो मेखलाकुण्डलान्वितः॥

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

(ज्योतिष)

ज्योतिषञ्चविडालास्यमिन्द्रगोपनिभं शुभम्।
अक्षसूत्रं जपां बिभ्रद् हस्तयोर्दक्षवामयोः ॥

(पुराण)

पुराणं चम्पकाभासं शुकवक्त्रं च तुन्दिलम्।
अक्षसूत्राभयं ज्ञेयं नानाभरणभूषितम् ॥

(चतुःषष्टिकला)

हस्तैः पद्मं रथाङ्गं गुणमथ हरिणं पुस्तकं वर्णमा-
लां टङ्कं शुभ्रं कपालं वरममृतलसद्धेमकुम्भं
दधानाम् । मुक्ताविद्युत्पयोदस्फटिकनवं
जपाबन्धुरैः पञ्चवक्त्रैस्त्र्यक्षैर्वक्त्रां नमामि
सकलशशिनिभां शारदां तां नमामि ॥

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

(यजुर्वेद)

अजास्यः पीतवर्णः स्याद्यजुर्वेदोऽक्षसूत्रधृत्।
वामे कुलिशपाणिस्तु भूतिदो मङ्गलप्रदः ॥

(ऋग्वेद)

ऋग्वेदः श्वेतवर्णः स्याद्द्विभुजो रासभाननः।
अक्षमालाधरः सौम्य प्रीतोऽध्याख्यायनोद्यतः।

(सामवेद)

नीलोत्पलदलाभासः सामवेदो हयाननः।
अक्षमालान्वितो दक्षे वामे कुम्भधरः स्मृतः

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

(अथर्ववेद)

अथर्वणाभिधो वेदो धवलो मर्कटाननः ।
अक्षमालान्वितो वामे दक्षे कुम्भधरः स्मृतः ॥

(निरुक्त)

इन्दुवन्निर्मलं शान्तं बकवक्त्रं कृशोदरम् ।
पाशपङ्कजसंयुक्तं साक्षसूत्रं सपुस्तकम् ॥

(छन्द)

जपाकुसुमसङ्काशं छन्दो ज्ञेयं विचक्षणैः ।
चकोरास्यं जपापुष्पं शक्तिबिभ्रच्छिखान्वितम्

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

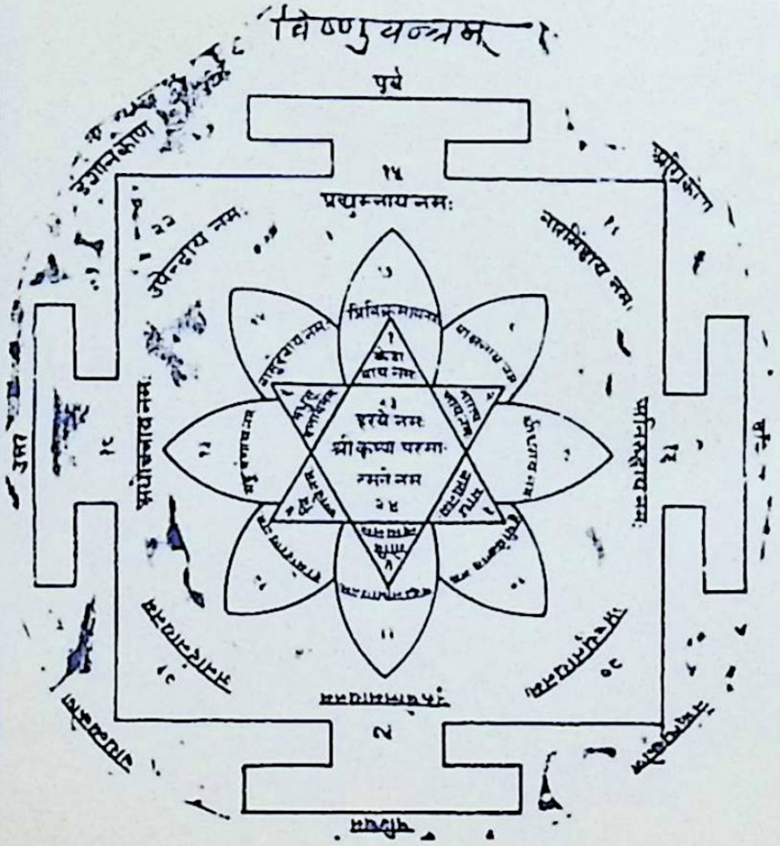

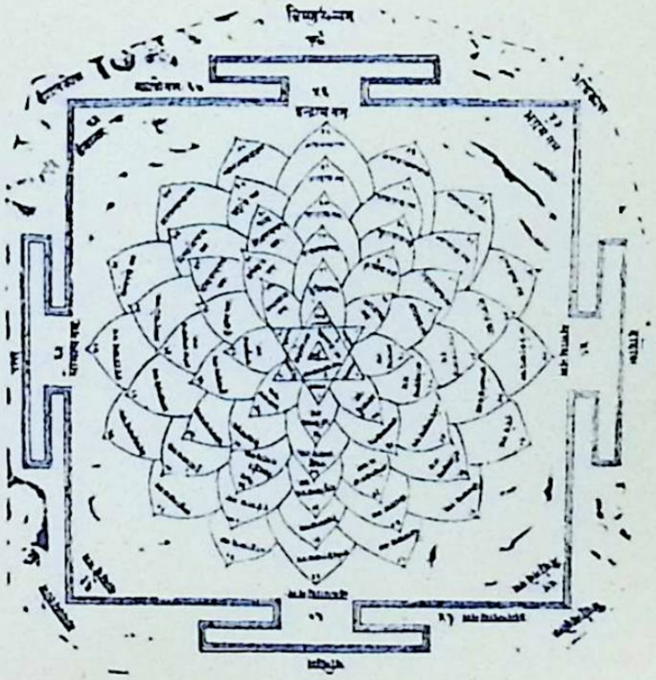

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection